

प्रकाशक—

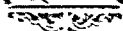
धन्नोमल कपूरचन्द जोशी,
मालीवाड़ स्ट्रीट, दिल्ली ।

To be had of
DHANNOMAL KAPOORCHAND Jewellers,
Maliwar Street,
DELHI.

पुस्तक विभेका पता—
धन्नोमल कपूरचन्द जोशी,
मालीवाड़ स्ट्रीट, दिल्ली ।

मुद्रक—
शिवचन्द तिवारी,
जगदीश प्रेस
१०८, काटन स्ट्रीट,
फर्रुखशा ।

भूमिका



आजकल कतिपय जैन नामधारी व्यक्तियों ने अपने विपरीत मूल्यों द्वारा दया-दान आदि पवित्र महावीर स्वामी के सिद्धान्तों का जित निन्दुरता के साथ विरोध किया है उसका अवलोकन करते हुए कहना पड़ता है कि—वीर्यंकरों के उत्तम सिद्धान्तों को इन निर्दय सिद्धान्तों से बचाना प्रत्येक धार्मिक जैन का कर्त्तव्य है।

मारवाड़ और मेवाड़ आदिमें रहनेवाली बहुसंख्यक जनता अशिक्षित तथा शास्त्र सम्बन्धी ज्ञान से रहित होकर दान, दया के विपरीत सिद्धान्त को मानती हैं; उसके सुधार तथा शिक्षा का कोई उपयुक्त साधन सम्बन्धि नहीं है, यत्कि दया-दान के विरोधी नामधारी 'जैन साधुओं' को बनाई हुई ढालों (पदों) के फेर में पड़कर घुरों तख से अज्ञानान्धकार में फंसाई हुई हैं।

इनके उद्धार का उपाय—तकें वितर्क करना—सच्छास्त्र अवलोकन करना, कल्पन्त निरोध (सख्त मना) किया गया है। अतः इनके उद्धार तथा धर्म सम्बन्धी शास्त्रीय ज्ञान का एक यही उपाय शेष रह गया है। वह है अनुकम्पा आदि विषयक प्रश्नों का प्रचार करना।

नाथो दार्द तथा पिता का नाम थो जीवराज था। आप ओस-वाल घंश में कुवाड़ गोत्रीय थे। सांसारिक विषयों को विष के समान संभ्र कर पूर्ण घैराग्य सम्पन्न हो, आत्म फल्याणार्थ मुनी श्री १००८ श्री मगन मुनी जी से सं० १६४६ वि० में दीक्षा प्रदण की। अतः आपका जन्म मारवाड़ में न होने से मातृ-भाषा मारवाड़ी नहीं है। तथापि अपनी विमल प्रतिभा से थोड़े ही समय में मारवाड़ी भाषा भी अच्छो प्रकार जानलो।

धर्म सम्बन्धी सिद्धान्तों को यदि मारवाड़ी भाषा में न बना कर शुद्ध हिन्दी में रचना करते तो जिस सिद्धान्त को लक्ष्य करके इसको रचना की गई है उससे सर्वथा नहीं तो अधिकांश में जनता को उस ज्ञान से घंचित रहना पड़ता, क्योंकि प्रत्येकप्राणी अपना मातृ भाषा में जितना शोध किसी ज्ञान को धारण कर सकता है, उतना किसी अन्य भाषा से नहीं। ऐसा निश्चय कर पूज्यश्रीजी ने इन ढालों को मारवाड़ी भाषा में उसी तर्ज और उदाहरण पर रचा, जिस तर्ज और उदाहरणमें दया-दान को पाप बतला कर धर्म विरुद्ध ढालें बनाई गई थीं।

पूज्यश्रीजी ने भाषा और कविता पर उतना ध्यान नहीं दिया है जितना इन तरह पंथों नामधारों साधुओं के अध्यारोपित दान-दया के विरुद्ध जमे हुये भावों के मिटाने पर दिया है। आपने अपनी कवित्व-शक्ति का परिचय देने के लिये नहीं, किन्तु भयंकर अंधकार में पड़ो हुई जनता का उद्धार करनेके लिये ही इनका निर्माण किया है अतः पाठक वृन्द इस पुस्तक

को कठिना की दृष्टि से नहीं, भाषों की दृष्टि से देखने की कृपा करेंगे ।

पूज्य श्रीजीने यद्यपि शास्त्रानुकूल ही ढालों की रचना की है तथापि अपने दृष्टि दोष से यंत्रालय की या किसी कार्यकर्ता की भ्रमसाधना से (जैसा होना स्वाभाविक है) कोई मूल रद्द गई हो तो उसके लिये कार्यकर्ता ही उत्तरदायी है । पुस्तक के भादि में शुद्धिपत्र लगा दिया गया है परन्तु माध्यायें यंत्रालय चलते २ टूट जाती है । अतः कुल पुस्तक का शुद्धिपत्र होना किसी धरा में सम्भव नहीं तो दुस्साध्य भवश्य है ।

इस संस्करण में पूज्य श्री १००८ श्री जवाहरलाल जी महाराज के सुयोग्य शिष्य श्री गण्डूलाल जी महाराज की बनाई हुई ढालों की उपयुक्त समझकर अन्त में सम्मिलित कर दी गई है । हमें पूर्ण विश्वास और भाशा है कि निष्पक्ष तथा सरल मनोभाव से अध्ययन करने पर अज्ञान का परदा अवश्य खुल जायगा ।

विनीत—

विषय-सूची

पहलो हालके दोहे

नाम विषय दोहे सं. दोहे मक.
 अनुसन्धका स्वाम्य और उनके विदे गये मेहेका उत्तर -१-१४

हाल पहली

	पेज
१—अधिकार मंगलुंवरका -	३
२- धा मेमनाधका का करलाअधिकार -	५
३- धर्मविद्या का करला अधिकार -	११
४—धा महावर स्वामीका गोशातक पर अनुसन्धा का अधिकार	१४
५—जिनन्दी का अधिकार	२०
६-हरिपगमिनी का अधिकार—	२२
७-अधिकार हरिबंशी मुनि का	२२
८—अधिकार धारणी का गनं विवरक अनुसन्धा का -	२४
९- अधिकार वृत्तनी का पृढ विवरक अनुसन्धा—	२८

नाम विषय	पेज
२—अधिकार हाथ बचाने का ..	६५
३—अधिकार क्षरराधो को निरपराधो कहने का ...	६७
४—अधिकार जोवना-भरणा शंछने का....	७४
५—अधिकार शत तापादि बंछवा आसरो....	७६
६—अधिकार नाँका का पानो बताने का....	७८

तीसरी ढालके दोहे

दोहे से दोहे तक

धर्म के लिये जोना-भरना चाहनेवालेसत्यधारी शून्ना हैं....१—५

ढाल तीसरी

	पेज
१—अधिकार मेधरथ राजा का पारेवा पर दया करने का...	८३
२—अधिकार अरणकजाँ का अनुकम्पा का...	८६
३—अधिकार माता बचाने से बुढगोपिया के ब्रतादि का भंग कहनेवालों को उत्तर ..	९३
शूरादेवका दाखला—	९८
४—अधिकार 'नमोराज रुदि ने अनु कम्पा नहीं को', ऐसा कहनेवालोंके लिए उत्तर ...	१०२
५—अधिकार 'भेनिनाथजीने गजसुकुनालको अनुकम्पा नहीं को, ऐसा कहनेवालों को उत्तर ...	१०६
६—अधिकार वीर भगवानके उपसर्ग दूर करनेमें पाप कहते हैं, इसका उत्तर...	११०

नाम विषय	पेज
७—अधिकार 'द्वीप-समुद्रों की हिमा देयता क्यों नहीं मेटे ?' इसका उत्तर....	११८
८—अधिकार फौजिक-चेड़ा का संग्राम मिटानेमें पाप कहते हैं, इसका वफ़्त....	१२२
९— अधिकार समुद्रपालजी ने खोर पर अनुकम्पा नहीं करी कहते हैं, उसके विषय में...	१२६

—

चौथी ढाल के दोहे	दोहे
त्रिविध हिंसा के समान त्रिविध रक्षा को पाप कहने- वालों के विषय में ...	१—११

चौथी ढाल पेज-१३२

	गाथा से गाथा तक
मेसे और जीवपूर्ण तालाब की कुयुक्ति का तथा पाप मेटने में पाप कहते हैं इसका उत्तर .	१—२६
सहायता, सम्मान देकर मिथ्यात्वी को समकित्ती बनाने में पाप कहते हैं, इसका उत्तर.	२७— ३३

पांचवीं—ढाल पेज-१३४

खोर, हिंसक, लम्पट को बेचल बनका पाप छुड़ानेके

समाधि विचार

पेसा

साधारण भाषा लक्षः

लिये उपदेश देते हैं, ऐसा कहनेवालों को उत्तर ... १-११

माने हुए दखते का बर्ण शुचता है, ऐसा कहनेवालों को उत्तर ... १२-२२

दखता और धन एक समान होनेसे इनके लिए उपदेश नहीं देते हैं, ऐसा कहनेवालों को उत्तर २३-२४

माने जाय के लिये उपदेश देते से उनका निजरा होनेसे बन्द हो जाते हैं, ऐसा कहनेवालों को उत्तर... २५-४७

परस्त्री-पारसको उपदेश देकर पाप सुझानेसे आरणी स्त्री कुंठ में गिरपड़ी, इसी तरह हिंसक को उपदेश देने से दखरे दख गये, दखरा दवा और हवा मरी, ये दोनों समान हैं, यदि एक का धर्म थकी, तो दूसरे का पाप भी मानो, ऐसा कहने वालोंको उत्तर... ४८-६६

जायों के लिये उपदेश नहीं देते; एक हिंसक को समझा कर घने जायों के गुंथ नहीं मिटाते; ऐसा कहनेवालों को उत्तर..

उ: बापा के घर शान्ति नहीं होवे ऐसा कहने-

वालोंको उत्तर मय विनम्रवक के शरणों के ७१ ११६



सातवीं टाल के दोरे—पेज २००

नाम विषय दोरे के नीचे तक.

१—सफल से निर्वैत को बचाने में पाप कहते हैं,
उसका उत्तर १-३

२—गुण्य और धर्म मिथ होने हैं या नहीं उसका
उत्तर ४-२८

टाल—सातवीं पेज-२०६

गाथा से गाथा तक

१—मात दृष्टान्तों का बखाना ... गाऊँ मूत्र आदि
बिनाकार जाय बचाने को कहते हैं, इसका
उत्तर तथा क्षमिता, पाना या, दुर्ग या, मांस
दाने या, मुर्दा बिलाने या, मनुष्य मारकर
मनुष्य बचाने या दृष्टान्त देकर दया ब्याते हैं,
उसका उत्तर १-५३

२—धर्मान्यासादि दुष्कृत्यों-द्वारा जाय छुड़ाना कहते
हैं उसका उत्तर ५४ ६५

३—कर्मों को मात्पर जाय बचाना कहते हैं उसका
उत्तर ६६ ७२

४—धर्मिक राजा ने पदक विद्याकर "अमारा" धर्म
का घोषणा करार इसमें पाप कहते हैं इसका
उत्तर ७३ ११९

५—दो पेशवाओं का दृष्टान्त देने हैं उसका
उत्तर १०० १६०

नाम विनय गाथा से गाथा तक

७—दा घेश्याभा के दूसरे दृष्टान्त का खण्डन १६२-१६८

८—जाय मारे नहीं मरता है, इसलिये उसकी रक्षा
में धर्म नहीं, इसका उत्तर तथा प्रसथावर की
हिंसा मरीची कहने हैं, इसका उत्तर १६९-१७४

९—गर्म में भमना उतार कर जीव बचाने वाले को
पाप कहते हैं, उसका उत्तर १७५-१८१

आठवीं डाल के दोहे पेज २४६
दोहे से दोहे तक

ध्वष्टया और पादुया दोनों शास्त्र सम्मत है १-५

डाल आठवीं पेज २४७

जाय में बलते जीव को बचाने में पाप कहते हैं,

उसका उत्तर १-१०

आंग्रधि देने में पाप कहते हैं, उसका उत्तर ११-२०

"उपदेश देकर 'हिंसा' छुड़ाने हैं" ऐसा कहने

वाला का उत्तर २१-३३

"कृत्य करने समय पाप छुड़ाने को उपदेश देने
हैं" ऐसा कहने वालों को उत्तर ३८-४८

"आयक के पेर में अङ्गुल में आँसुओं की घाल क्यों
नहीं छुड़ाने" ऐसा कहने वालों को उत्तर ४९-६४

"गृहस्थ का उपधी में जाय मरते हैं, उन्हें छुड़ाने
क्यों नहीं आते हो", ऐसा कहने वालों को उत्तर ६५-७३

नाम विषय

गाथा से गाथा तक

‘समयसरणमें आते जाते मनुष्योंसे जीवोंकी घात
होती थी और धोपिक के दूहरे ने डेडबं के रूपमें आते
हुए नन्दनमनिहार को चौध डाला । इनको पचाने
महावीर स्वामी ने साधु क्यों नहीं भेजे ?’ ऐसा कहने
वालों को उत्तर

७५***८५

साधु धावक को एक अनुकम्पा है, ऐसा कहने
वालोंका विचार

८५***६३

वर्तमानकाल में मरते जीव को यताना पाप है,
ऐसा कहनेवालों को उत्तर

९५***१०२

लाय में डलते हुए जीव कर्मों की निर्जरा करते
हैं, ऐसा कहनेवालों को उत्तर

१०३***१०८

अल्पारम्भ गुण में नहीं है, ऐसा कहनेवालों को
उत्तर

१०६***१२१

लाय बुझाने का अल्पारम्भ यदि गुण में है, तो
साधु बुझाने क्यों नहीं जाते ? ऐसा कहने वालों को
उत्तर

१२२***१३२

आग बुझाना और कसाई को मारना एक
सरीखा कहने हैं, इनको उत्तर

१३३***१४३

हाल नवमो

पेज-२८१

नाम विषय	गाथासे गाथा तक
दया के साठ नाम	१०००२५
त्रिविधि से जीव रक्षा करने में पाप कहते हैं,	
उसका उत्तर	२६००३५
रक्षा करने में जीव मरते हैं, अतः रक्षा पाप है,	
ऐसा कहनेवालों को उत्तर	३६-५५
“साधु को जीव नहीं घसाने तथा रक्षा को मली	
नहीं समझनी” ऐसा कहनेवालों को उत्तर	५६-६१
जीव का जीना नहीं चाहते सिर्फ घातक का पाप	
टालना चाहते हैं, ऐसा कहनेवालों को उत्तर	६२००६३
“त्रिविधे-त्रिविधे जीव रक्षा न करणो” का उत्तर	७०००७५
प्राणों, मूल, जीव, सत्य को रक्षा में एकान्त-पाप	
कहते हैं, उसका उत्तर	७६००८३
धर्म के कार्य में धारम्भ करने में समकित जाती	
है, ऐसा कहनेवालों को उत्तर	८४-९३
माधर्मो घटसत्त्वता को एकान्त पाप कहनेवालों	
को उत्तर	९९००१०
जीवों का दुःख मिटाने में एकान्त पाप कहते हैं,	
उसका उत्तर	१८००१०५
धर्मकार्य में हिंसा करने से बौध का बोज़ नष्ट	
होना है, ऐसा कहनेवालों को मफान के उदाहरण	
सहित उत्तर	१०१०००१०२

नाम विषय	गाथासे गाथा तक
“दर्शन को धर्म में और हिंसा को पापमें अलग अलग मानते हैं” उसका खुलासा	११०***११७
“यदि आरम्भ से उपकार होता है, तो भूठ चोरी से भी होना चाहिये” ऐसा कहने वालों को उत्तर	११८*** १२४
दया का स्वरूप	१२५***१२६

श्री गध्वूलालजी कृत ढालें

नाम विषय	पेज
पहली ढाल	३१३
ढाल दूसरी	३२२
ढाल तीसरी	३३१
ढाल चौथी	३३४
ढाल पांचवीं	३३८
ढाल छठवीं	३४१
ढाल सातवीं	३४६
गजल	३४९

॥ इति शुभम् ॥





चित्रमय अनुकम्पा-विचार

दोहा

करुणा वरुणालय प्रभो, मङ्गलमूल जनन्त ।

जय-जय जिनवर विबुधदा, सुखमय सुषमावन्त ॥१॥

जनन्त जिन हुजा केवली, मनपर्यव मतिमन्त ।

अवधिवर मुनि निर्मला, दशरुव लगि सन्त ॥ २ ॥

जागम यलिया ये सह, भाषे जागम सार ।

पवन न भ्रद्वे तेहना, ते रुलसे संसार ॥ ३ ॥

अनुकम्पा जाछी कही, जिन-जागम रे मांय ।

अज्ञानी सावज कहे, खांटा बाज लगाय ॥ ४ ॥

हालां नहिं, जालां हुई, अनुकम्पा री धान ।

पंचमकाल प्रभाव थो, हा ! हा ! त्रिभुवन तान ॥५॥

अनुकम्पा उठायवा, मांडो माया जाल ।

मूरख मछला ज्यो फँस्या, रुले जनन्तो काल ॥ ६ ॥

दुःखमि जारे पंचमे, कुगुद बलायो पन्थ ।

अनुकम्पा खोटी कहे, नाम घरावे सन्त ॥ ७ ॥
 आक-धोर ना दूध सम, अनुकम्पा घतलाय ।
 मन सौ सावज नाम दे, भोलाने भरमाय ॥ ८ ॥
 सपाप सावज नाम हे, हिंसादिक थी होय ।
 अनुकम्पा हिंसा नहीं, सावज किम् विष होय ॥ ९ ॥
 अनुकम्पा रक्षा कही, दया कही भगवन्त ।
 पाप कहे कोई तेहने, मिथ्या जाणो तन्त ॥ १० ॥
 अमृत एक सो जाणउवौ, अनुकम्पा विण एक ।
 भेद प्रभू नहिं भाषियो, सूत्र मांठी देख ॥ ११ ॥
 तो विण कृगुरु कदाग्रहे, चढ़िया चित्वा पास ।
 मन सूं करे परूपणा, करहो ज्यारी रीस ॥ १२ ॥
 निरवदने सावद बलि, अनुकम्पा रा भेद ।
 अणहंता कृगुरु करे, ते सुण उपजे वेद ॥ १३ ॥
 भरमजाल नाहन नण, रचूं प्रपन्ध रमान्द ।
 पारो भवजीवां ! तुम्हे, परने मंगलमाल ॥ १४ ॥

—*—



ढल-पहली

१—अधिकार मेघकुंवरका

(तर्ज—धिग धिग छे उणी नागश्रीने)

मेघकुंवर हाथी रा भवमें,

करुणा करी श्री जिनजी बनाई ।

प्राणी, भूत, जीव, सन्व री,

अनुकम्पा की, समकित पाई ।

अनुकम्पा सावज्ञ मन जाणो ॥ अनु० ॥१॥

निज देह री परवा नहिं गखी,

पर अनुकम्पा रो हुवो रसियो ।

पीस पहर पग जंघो राख्यो,

पर-उपकार नूँ मन नहिं खसियो ॥ अनु० ॥ २ ॥

पढ़नसंसार कियो निण चिरियां,

अरे गिक घर उपनो गुन पाई ।

आठ रमणी तज दीक्षा लीयी;

ज्ञाता अघ्यपने गनघर गाई ॥अनु०॥ ३ ॥

(फहे) "बलता जोय दावानल देखी,

सुण्डसूँ पकड़के नाय बचाया ।"

सूदमत्यारी या खोटो कल्पना,

बलता जोय सुनर न पताया ॥अनु०॥४॥

मण्डल जीवां थो पुरण भरियो,

शसं घैठनं नै स्यान् नं मिलियो ।

जोय लाय किण जोगी मेले,

खोटो—धक्ष मिथ्यानी झलियो ॥अनु०॥५॥

मुसलां न मारयो अनुकम्पा पतावे,

(तो) एक जीजन मण्डल रे माई ।

जोय घणा जामें आइने बसिया,

(ह्यां) सगलनि हापी तो मारया नार्हे ॥अनु०॥६॥

(जो) मुसलो न मारया रो धर्म पनाओ,

(तां) दूजा (ने) न मारयां रो कयो नहि केवो ।

(जो) मुसला रो प्राण बचाया धर्म है,

तां दूजा जोय बचाया रो (पिण) केवो ॥अनु० ॥७॥

जोजन मण्डले जोय जो बसिया,

हाथी भवमें मेघकुमार ।

ढाल पहली गाथा ७, ८ का भाव चित्र ।

॥

“(जो) सुमन्यो न मासो रो घमे यतायो,

(तो) दूजा (नि) नमासो रो क्यो नहि' केयो ॥

(जो) सुमल्लारा प्राण वचाया घमे हे,

तो दूजाजीय बनाया रो (पिण) केयो ॥ अनु० ॥ ३॥

जोहन मण्डल जीय जो वचिया,

मंदमती ताने पाय वनाये ॥

त्यारे लेखे सुमला वचियारो,

“घमं” बहो जा रिण विघ भाये ॥ अनु० ॥ ८॥





जीव दया सब जगने बनाया,

जादवी हिंसा भेदण काजे ।

पंचेन्द्र प्राणी रा प्राण बनाया,

प्रत्यक्ष न्याय प्रगुजी रां राजे ॥ अनु०॥१॥

इत्यादि उपकार रे अर्थे,

व्याध करण रां पात ज मानी ॥

स्नान अर्थे पानी बहुत देख्यो,

जामें भी जीव जाने बहुत जानी ॥ अनु०॥३॥

गिर पशु-पक्षा रां हिंसा मोटो,

रक्षा गिण उपांगी मोटो जानी ।

या हो भेद सब जगने बनाया,

स्नान निगा मूतर रां वा पानी ॥ अनु०॥४॥

मन्दमनी बहुत जीव मरीणा।

पंचेन्द्रा पंचेन्द्रा भेद न दाने ।

छात्रा भ्राता हिंसा ग मदन।

वेद अङ्गनां मंगल माने ॥ अनु०॥५॥

जो वा श्रद्धा भेष रां हला।

वा पत्नी ने दण्ड स्नान न करणा ।

बहुत रा जीवों छी अहम्यगुना ये,

भगवान श्री नेमोनाथजी का जीव लुड़ाना ।

दाल पहलो गाथा ३, ४ और १३, १४ का भाव निब ।

—————

इस्यादि उपकार रे अर्थ,

ध्यायकरणरो बातज मानो ॥

स्नान अर्थ पाणो बहु देख्यो,

जामेभी जीव जाणे बहु खानी ॥३॥

गिण क्यु पक्षीरो हिंसा मोटी,

रक्षा गिण उयांती मोटी जाणी ॥

वाही भेद भव जगते बनाया,

स्नान कियो मृतरुी वा पाणी ॥४॥

“ध्याहरे काज मरं बहु पाणो,

हिंसा से इरिया निर्मल खानी ॥

मार्गिण प्रमुक्तीरो मनस्या ज्ञाणो,

जाया से छाह दिया भभव दानी ॥१३॥

जीव लुहयोँ, नेमजो हरण्या,

बड़ा मी दानी मृत्रमे गाई ॥

बुंदल गुन भद कणहोरो,

मये माभूरन दीया बघारं ॥१४॥

आमिच (मांस) भक्षी रे भोजन सारु,
 मांड्या छे घात दिल ठानी ॥अनु०॥ ११॥
 सारधि धवने रु ज्ञान से जाणी,
 दीन द्यालु दया दिल आणी ।
 जीवां तणो हित वंछथो स्वामी,
 आत्म सम जाणवा ते प्राणी ॥अनु०॥ १२॥
 व्याह रे काज मरें यहू प्राणी,
 हिंसासे हरिया निर्मल ज्ञानी ।
 सारधि प्रसुजो रो मनस्या जाणी,
 जीवां छे दिवा अमपदानो ॥अनु० ॥ १३॥
 जीव छुट्या सूँ नेमजी हरव्या,
 वक्षीसां दीनी सूत्र में गाई ।
 कुण्डल युगम अरु कणहोरो,
 सर्व आमूयण दीवा वघाई ॥अनु०॥ १४॥
 पांछे परपोदान जो दीवां,
 दान-दया दोनूँ ओळखावा ।
 संजम सहस्रात्मनमें लोचो,
 केवल ले प्रभु मोक्ष सिवावा ॥अनु०॥ १५॥
 (६६) “जीवां रो हित नहिं नेमजो वंछयो”

दीपिकादिक री साख बतावे ।

दीपिकामें हितकारो (अर्थ) * भाष्यो,

उपने जज्ञानी जाग छिपावे ॥ अनु० ॥ १६ ॥

नहिं मारण ने हित पताओ,

(नो) जोव पचाया लहित किम पावे ।

नहिं मारण निज हित पहिचाणो,

मरतो पचाया स्व-परहित पावे ॥ अनु० ॥ १७ ॥

जीव पने जीने रक्षा कही प्रभु,

देही (जीव) री रक्षा ने दया पताई ।

शम्भरदार में पाठ उघाहो,

मन्दमती रे मन नहिं भाई ॥ अनु० ॥ १८ ॥

“जीवनि नेमती नाप छुहाया,

मन्दमती एवी दान उचारें ।

“जबचूरी दीपिका टीका” अर्थ ने,

म० ॥ उ० २ थो नाप विचारें ॥ अनु० ॥ १९ ॥

* “अनुवृत्ते शिरोमो”

(इत्यादिप्रकारेण, कः २२ अ० १८)

टीका—अनुवृत्ते मर अनुवृत्तेव वृत्ते इति अनुवृत्ते-
मरुत्तं जीवो हिः जीव विन्दे विन्देत् ।

जीव छुट्या री वक्षोसो दीपि,

“अवचूरी दीपिका टीका †” देख्यो ।

†—“अइ मञ्जु कारणा ए ए. इम्मंति सुवहू जिया । न मे पर्य
तु निस्तेसं परलोगे भविस्मई ॥ सो कुण्डलाग जुवलां, सुतगं च
महायसो । आभरणाणि य सञ्जाणि, साग्हिस्स पगामई ॥

(उक्त० सूत्र अच्य० २२ गाथा १९-२०)

दीपिका—तदा नेमिकुमारः किं चिन्तयतोऽप्याह यदि मम विवाहादि
कारणेन पते सुवहवः प्रचुराप्नोवाः इतिष्यन्ते । मारयिष्यन्ते तदा ए
तत् हिमाख्य कर्म परलोके पाम्भवे निःश्रेयसं कल्याणकारी न भवि-
ष्यति परलोक भोरुत्वस्य अत्यन्ता अभ्यस्तत्रथा एवं अभिरान
अन्यथा भगवन्शरमदेहत्वात् अतिशय ज्ञानरसाच्च कुत्र एवं विधा
चिन्ता इति भावः ॥ १९ ॥ स नेमिकुमारो महायशाः नेमितायस्या-
ऽभिप्रायान् सर्वेषु जीवेषु बन्धनेभ्या मुक्तेषु सत्सु सर्वाणि आभरणाणि
सार्धये प्रगामयति ददाति तान्पाभरणाणि कुण्डलाता युगला पुनः
सूत्रकं कटिद्वयक चक्रागत आभरण शब्देन हागदीति सर्वज्ञो राज्ञ
भूषणानि साधये ददी ॥ २० ॥

टीका—मयान्तरेषु परलोक भोरुत्वस्यात्यन्तमभ्यस्तनयैवमभिवान-
नमन्यथा चरम शरीरत्वादिशय ज्ञानित्वाच्च भगवतः कुत्र एवाविच-
चिन्तावसरः ? एवं च विदित भगवदाकृतेन साग्धिना मोक्षितेषु
सर्वेषु परिलोपितोऽसौ यत्कृत्वा स्तदाह—‘सो’ इत्यादि ‘सुतकवे’
तिष्ठतीमूत्रम्, अर्पयतीन योगः, किमेव देवेत्वाद्—आभरणाणि च
सर्वाणि श्रेयाणीति गम्यते ।

मृल पाठे यक्षीत्ती भापी,

मन्दमनी ! जरा समझो लेखो । अनु० ॥२०॥

आज पिन या परतख दीखे छे,

मननाने कामसे स्वामी रीझे ।

जब राजी हो यक्षीत्ती देवे,

पडित न्याय विचारी लीजे ॥ अनु० ॥२१॥

जीव छुट्या प्रभु राजी न होना,

यक्षीत्त नेमजा काहेको देना ।

"निर्दय ऐसो न्याय न लेखे,

करुताकर यो परगट केना ॥ अनु० ॥२२॥

३-धर्मरुचिजीका करुणा अधिकार

कटुक आहार जेहर सम जानी,

परठन री गुब आज्ञा दीनी ।

स्वादन रो निषेध जो कीनी,

धर्मरुचिजी 'नहन' कर लीनी ॥ अनु० ॥ १ ॥

कटुक आहार सुँ किड़ियां मरती,

अनुकन्या मुनि मन मांही जानी ।

कटुवा तुन्या रो भोजन कीयो,

धर्मरुचीजी ! घन गुणखानी ॥अनु०॥२॥

एक आशा पिन आहार कियो मुनि,

किड़ियां री अनुकम्पा भाणी ।

विशुद्ध भाय मुनि'रा अनि आछा,

आराधिक ह्रया गुणखानी ॥ अनु० ॥३॥

कहत कुतर्की "धर्मरुचीजी [नो],

किड़ियां पयायण भाय न ह्यायो ।

आपों सँ सरता जीव जाणी ने,

पाप हटा मुनि कर्म खपाया" ॥ अनु० ॥४॥

जीव बचावा में पाप पनाया,

इण विष भोला [जन] ने भरमाये ।

न्यायवादी जानीजन पृच्छे,

[नां] मंदमनो ने ज्याय न आये ॥ अनु० ॥५॥

अचिन मही मुनि विन्दू परख्यां,

किड़ियां मारण रा नहिं कामी ।

ज्ञान पिया किड़ियां त्या मरतो,

जाने बचावण कामी थामी ॥ अनु० ॥६॥

अचिन मू परख्यां पाव जां लागे,

तो गुरु परदण री आकास न रेना ।

उद्धारादि निन मुनि परटे,

एपजे मरं जीव त्यां माहीं केता ॥ जनु० ॥१॥

निण गी हिंसा मुनि ने नहिं लागे,

मृतर मांहीं गणधर भापे ।

धर्मरुचीजी तो विव से परळ्या,

जिनने पाप कुनको दाखे ॥ जनु० ॥२॥

जो मुनि कइयो तुन्यो न खाना,

तो परळ्या दोप मुनी ने न काई ।

करणासागर किट्टियां रे खानिर,

निज तन री परवा नहिं लाई ॥ जनु० ॥३॥

या जयिकाई जीवदया री,

मृतर नें गणधरजी गाई ।

“परागुकल्पे नो जायागुकल्पे ६”

बांधा ठाणामें यों द्रशई ॥ ज० ॥१०॥

*—इत्यादि दुर्गमजाया ६० ६०—आपणु कल्प, जन्मने नो पंतुगुत्तर ॥

(टाणामुद्र टाण ४ वर ० ६ मृद ३५२)

टीका—आपणुत्तरक—आपणुत्तर मृदु मने इत्यादि जिन-
कल्पको वा पणुत्तरको वा निर्दुत्तर, पणुत्तरक निहितपणुत्तर
होयकन आपणुत्तरको वा इत्यादिने मनेपणुत्तर, आपणुत्तरक
'इत्यादि' इत्यादि आपणुत्तरक पणुत्तर आपणुत्तर इत्यादि ॥

परजीवों रा प्राण बचावन,

अपना प्राण ही परचा न राखे ।

ऐसा तो बिरला इण जग में,

धर्मकृती सा शास्त्र साखे ॥ अनु० ॥१॥

४—श्री महावीरस्वामीका गोशालकपर

अनुकम्पाका अधिकार

केवलजानी घोर जिनेश्वर,

गौतमजी का भेद पनायो ।

दयामाय [मे] अनुकम्पा करने,

में पिण गोशाला ने बचायो ॥ अनु० ॥१॥

गोशाल बचाया में पाप होना नो,

गौतमजाने क्यों नहि कीनो ।

“पाप किया मैं, तुम मन करुणो,”

यो उपदेश प्रभू क्यों न दीनो ॥ अनु० ॥२॥

केवली ना अनुकम्पा केये,

मन्दमनी नामें पाप पनाये ।

जानी बचन नज भूढ़ां रा माने,

वे नर मोड़ मिथ्यानम पाये ॥ अनु० ॥३॥

असंजती रो नाम लेई ने,

गोशाल घचाया रो पाप जो केने ।

माखी-मूपक पात्र से काढे :

ज्यांरा तो जाय सरल नहिं देणे ॥ अनु० ॥१॥

जूँवां असंयति ने वे पोणे,

पाप जाणे तो कथों नहिं कळे ।

जद कहे न्हारी दया उठ जाणे,

ता वीरने दोष कहे कृण लेखे ॥ अनु० ॥२॥

प्राणि जादि अनुकम्पा करने,

सैमायण जूँवां शिर धारे ।

सूत्र भगोनी सनक पन्द्रहों,

केवल ज्ञानी नचन उचारे ॥ अनु० ॥३॥

प्राणी भूत जीव सन्वानुकम्पा,

सानागिदनी रो कारण भाष्यो ।

सप्तम शनक छटे उहे शे.

वीर प्रभू गौतम ने दाख्यो ॥ अनु० ॥४॥

मेघकुँवर अधिकार पाठ यों.

प्राणी मृतादि जीवदया रो ।

यां पाठां में असंजनि जाया,

पाप नहीं अनुकम्पा किया रो ॥ अनु० ॥८॥

अनुकम्पा उठावन कारण,

धीरने छेपी पाप पताले ।

सूत्र रो भ्याप बनाये ज्ञानी,

तो मंदमती ने जयाप न आवे ॥ अनु० ॥९॥

[कहे] “दोष मावा ने क्यों न पचाया,

गोशाला थी बलना जागी ।”

(उत्तर) आयुष आये ज्ञानी जाण्यो,

न्याय न मोने लेंवानागी ॥ अनु० ॥१०॥

विहार कराया तो धारे [पिग] लेने,

दोष तो द्वाई लेश न लगी ।

क्यों न विहार कराया म्यामो,

घान जागना [वा] दोनांगि मागे ॥ अनु० ॥११॥

जद कहे “निश्चय ज्ञानमें देख्यो,

दोनांगि घान पदां इज आई ।

जाम् विहार करायो नहीं,

अविनयना टांदा रहि आई” ॥ अनु० ॥१२॥

मरद भाव पौ ही मुम जरयो,

अनुकम्पा छे [तो] पल न करि ।

ज्ञानी ज्ञान देखे ज्यों धरते,

त्रिणरी खोंच करों मन भाई ॥ अनु० ॥१३॥

अनुकम्पा सावज थापण ने,

सूत्रपाठ रा अरथ ने टेले ।

छे लेश्या छट्मस्थ धीर रे,

बोल मिध्यानी पापको जेले ॥ अनु० ॥१४॥

किसन, नील, कापोन लेश्या रा,

भावमें साधुपणा नहि पावे ।

प्रथम शतक दृजे उद्देशे,

(तो) धीरमें पद्लेश्या किम थावे ॥ अनु० ॥१५॥

“कपाय कुशील” रो नाम लेई ने,

अज्ञानी भोला (ने) भरमावे ।

मूल-उत्तर गुण दोष न सेवे,

भाव माठी लेश्या किम पावे ॥ अनु० ॥१६॥

कपाय कुशील भाव लेश्या जो माठी,

होतो (तो) अपडिसेवी क्यों कहता ।

इन लेखे द्रव्य लेश्या छः जाणो,

भाव लेश्या (रा) शुध भाव घदीता ॥ अनु० ॥१७॥

‘कषायकुशील’ ‘सामायिक’ चारित्र्ये,

छे लेश्या रां नाम जां आयो ।

प्रथम शतक वृजे उद्देशे,

टीकामें निगरो भेद यथायो ॥ अनु० ॥१८॥

किम्बन् नील कषाय इव्य लेश्या (में),

साधुगणो शुद्ध भावे जाणो ।

छे लेश्या निगरो कश्चिये,

भावे सो नीलो ही शुद्ध विछाणो ॥ अनु० ॥१९॥

मेथो छे लेश्या इव्य कश्चिये,

भावे सो नीलो ही शुद्ध विछाणो ।

कषायकुशील अरु संजम मांही,

भावे ग्यारो लेश्या मन नागो ॥ अनु० ॥२०॥

छेदीन्यायन अरु सामायिक,

मयय छे लेश्या इव्य जाणा ।

यो ही न्याय मनसर्गवज्जाने,

भावे सो नीलो ही शुद्ध विछाणो ॥ अनु० ॥२१॥

इग न्याय इव्य छे लेश्या पावे,

जानी न्याय जुगनमे यथावे ।

बादा होय विवेक गुं ताले,

खोटी नाणसे समकित जावे ॥अनु० ॥२२॥

पुलाक पदिसेधन कुशील ने,

मूल उत्तरगुण दांपी भाप्या ।

ते (पिण) तीनूँ भाव शुद्ध लेश्यामें,

मृत्पाटे मूनर में दाळश ॥ अनु० ॥२३॥

बुझस पिण उत्तरगुण दांपी,

तीन भावलेश्या तिहां पावे ।

कपायकुशील तो दांप न सेवे,

खोटी लेश्यां रा भाव कर्णो जावे ॥अनु० ॥२४॥

कल्पानीन अरु जागम विहारी,

छट्मस्थपणे प्रभु पाप न कीतो ।

आचारंग नवमें अध्ययने,

केवलज्ञानी परकाश मूँ दीनो ॥अनु० ॥२५॥

अनुकम्पा कर गोशालो वचायो,

मन्दमनी रं मन नहीं भायो,

अछती हे लेश्या प्रभुरं लगाई,

अनुकम्पा-द्वेषी आल चढायो ॥अनु० ॥२६॥

५—जिनकृपीका अधिकार

(क०) “जिनकापि यह अनुकम्पा कीधी,

रेणादेयी सामो निण जायो ।

हौलक पक्ष हेठो उतार्यो

देयी आय निण लहग में पोयो ।

हा अनुकम्पा मावज जाणो”

(अनु० बा० १ गा० १०)

मूत्र विच्छेद यों घाम उठा केहे,

अनुकम्पा मावज बनलाथे ।

अनुकम्पा पाठ निहां नहि चाल्यो,

अज्ञानी छूटरा माला बलाये ॥अनु०॥१॥

‘कटुणगरमे रयणा जद बांली,

जिन कृपियां रे कटुणगरम आयो ।

कटुण पाठ ज्ञाताम्वरमें,

तो विग माला भरम कैलायो ॥अनु०॥२॥

कटुणगरस अनुयोग कृषारं,

आठयो (रम) पाठमें वीर बनायो ।

मिय रों वियोग हुया यों आवे,

ऐसा धी गजरजी गायो ॥ अनु० ॥३॥

ज्ज रस जिग कृपियां रे जायो,

रणादेयो रा वियोग धो पायो ।

दोनूं मृतर रों पाठ सरोखो,

लक्षण से भी तुल्य दिखायो ॥ अनु० ॥४॥

मोह कालुणरसमें अनुकम्पा,

भेदवारथां ए झूठी गई ।

शंका होवे ना मृतर देखो,

मन पहज्यो झूठा कंद माई ॥ अनु० ॥५॥

टाणाङ्ग द्दामें टाण रे मांहीं,

अनुकम्पादान प्रथम पनायो ।

कालुणी दान रों पाठ हे न्यारो,

अर्थ दान्यां रों न्यारो दिखायो ॥ अनु० ॥६॥

'कालुण' (रस) 'अनुकम्पा' एक नहीं छे,

"ज्ञानात्त्व" रों भेद पनायो ।

अनुकम्पा, दया, रक्षा कहिये,

कालुण (रस) दुःख वियोगमें गायो ॥ अनु० ॥७॥

रात-दिवस ज्यों दोनों ही न्यारा,

(मासूँ) हिरणगमेयो ने पाप घनाये ।

जावण आवण रो नाम लेई ने,

अनुकम्पा ने सावज गाये ॥ अनु० ॥२॥

जावण आवण रो तो किरिया न्यारी,

अनुकम्पा (तो) परिणामा में आई ।

जिन घन्दन देव आवे ने जावे,

[तो] घंदना सावज जिन ना घनाई ॥ अनु० ॥३॥

आवण जावण [से] अनुकम्पा जो सावज,

[तो] घन्दना ने पिण सावज कहणी ।

[जो] आवण जावण घंदना नहिं सावज,

[तां] अनुकम्पा पिण निरवद वरणी ॥ अनु० ॥४॥

मंदमती जंघा शरघा सूँ,

अनुकम्पा सावज घतलाये ।

घन्दना ने तो निरवद के वे,

जाणे म्हारी पृजा उठजावे ॥ अनु० ॥५॥

देव करी सुलसा री कठणा,

ते धी छेहं घाल घचाया ।

कंस रा भय धी निरभय कीधा,

अभयदान फल देवता पाया ॥ अनु० ॥६॥

सांचा हेतू जक्ष सुणाया,

[जद] ब्राह्मण बालक मारण जाया ।

राजकुमारी भद्रा वारथा,

तो पिण मृदु नहीं शरमाया ॥ अनु० ॥१॥

यक्षदेवने कोप जा जायो,

कष्ट देई ब्राह्मण समझाया ।

कूटनहार ने जक्षे कूट्या,

शास्त्र मांहे प्रगट घताया ॥ अनु० ॥२॥

अनुकम्पा थी तो वचन उचारथा,

पिण न दया थी ब्राह्मण मारथा ।

भवजीवां ! तुमें सांची शरघो,

अज्ञानी खोटा वचन उचारथा ॥ अनु० ॥३॥

—अधिकार धारणीकी गर्भ विषयक

अनुकम्पा

गर्भ री अनुकम्पा करी राणी,

धारणी अजतना सहु टारी ।

जयणा सूं बैठे ने जयणा सूं उठे,

खाटामोठा भोजन तजे भारी ॥ अनु० ॥१॥

आँधा री लारे आंधा जावे ॥ अनु० ॥६॥

श्रावक रा पहला व्रत माँह,

पञ्चम अनि चारे प्रभु घेये ।

अशन समय भान पाणी न देवे,

[तो] अनिचार लागे व्रत नहिं रेवे ॥ अनु० ॥७॥

भानपाणी छोड़ाया हिंसा,

[तो] गर्भ नूखे मारया किम घर्मा ।

अज्ञानी इतना नहिं सोचे,

गर्भ रा दया उठाई अघर्मा ॥ अनु० ॥८॥

जो पालक ने नाथ चुँखावे,

[तो] पहलों व्रत श्राविका रो जावे ।

[जो] गर्भने पाई भूखाँ मारे,

तो तप-व्रत निण रे किम धावे ॥ अनु० ॥९॥

गर्भवती ने तपस्या करावें,

उपवासादि रो उपदेश देवें ।

गर्भ मरे निण री दया नाहीं,

प्रगट अघर्म ने घर्म वे केवें ॥ अनु० ॥१०॥

गर्भ जाहार माना रे जाहारे,

‘भगवती’ माहीं वीरजी भाये ।

बूढा रे घर निज हाथ पुगई ।

दुरगुण नाशक सद्गुण भासक,

अनुकम्पा री रीत दिखाई ॥२॥

मोह-अनुकम्पा इणने बतावे,

अज्ञानी जंघा हेतु लगावे ।

स्वार्थ रहित अनुकम्पा धरम ने,

सावज कहि कहि जन्म गमावे ॥३॥

ईंट तोकण जिन आज्ञा न देवे,

तिन सूं अनुकम्पा सावज केवे ।

जंघी अद्दा धी जंघी सूझे,

निणयी कुहेनू पहुला देवे ॥४॥

अनुकम्पा परिणाम में जाई,

ईंट तोकण किरिया छे न्यारी ।

[जो] नेमबन्दन री मनसा जागी,

[तब] चतुरंगी सेना सिणगारी ॥५॥

सेन्या री जिन आज्ञा नहि देवे,

बन्दनभाव तो निर्मल जाणे ।

(तिम) ईंट तोकण री आज्ञा न देवे,

(गिण) अनुकम्पा जिन आछी बन्नाणे ॥६॥

बन्दतकाजे सोना यत्नाई,

अनुकम्पा काजे ईंट उडाई ।

सोना बले बन्दत नहिं मायज,

अनुकम्पा ईंट धीं मायज नाई ॥७॥

उंच गात्र बन्दत कळ माळपो,

कलगाण्यात १ गुणनीम हे माहिती ।

अनुकम्पा कळ मायावेदनी,

भगवतिमूर्धे २ जिन कृत्माई ॥८॥

दुःखीं काळज आळा जाणी,

समदृष्टी हे आज्ञा माई ।

भवदेदत (संसार वदत) सकाम निजता,

जानाडिह सुख में आई ॥९॥

दुःख बने अज्ञानाजन १,

अकाम निजता में गिण पाणे ।

आगे बद्नां समदृष्टि काज,

सद वा जिन आळा में आवे ॥१०॥

दुःखाया हेतु हरिः प्राणी,

पंचेन्द्रिय जीवां ने मारण घावे ।

मांस अर्थां भूख दुःख रा पीड़था,

वां अज्ञानी जीवाने कोण चेतावे ॥११॥

दयावन्त [वाने] उपदेशे वारयां,

अचित्त वस्तु देई कारज सारथा ।

पंचेन्द्रिय जीव रा प्राण यचाया,

हिंसक हिंसादि पाप ज टारथा ॥१२॥

मूर्ख इणमें पाप चतावे,

ज्ञानी पृछे जव जाय न आवे ।

जो हिंसा उपदेशे छुड़ावे,

वाहिज साज देई ने छुड़ावे ॥१३॥

हिंसा छुटी दोनां हि ठामे

जिण में कर्क न दीसे काईं ।

साज सूँ हिंसा छुटी निण मांहों,

एकान्तपाप री कुमति ठेराई ॥१४॥

साज सूँ हिंसा छुट्या मांहो पापो,

तो घोडा दीडावण* जुक्ति यो लायो ।

* जैसा कि ये कहते हैं :—

आय राजाने इम कहै, सानिडज्यो महागायजो ।

बिज ध्यायत परदेशो राग ने

केर्मा समण जद धर्म पतायो ॥१५॥

घांङ्गा दांङ्गाई राजाने ल्यायां,

इण में तां धर्मदलाली पताये ।

(तो) माज देई ने हिमा छुङ्गाने,

(जामे) पाव पतायनां लाज न आवे ॥१६॥

मृषुद्धि प्रथान धां जिनजत्रु राजा,

पाणां परिणय धां समताणो ।

या पग धर्म दलाली जानो,

आरभ हृयां ने अण्ण विछाणो ॥१७॥

मात्रा मूटा रां नाव लेई ने,

कृमतां धांटां ने धामाये ।

यादा वेग कदाह ना म नासा चिया बरावती ।

यम कण्ठो विज भे ॥१८॥

चिच्छिद इ क्खव मय ने, मन्धटाह तो मज्झिमेत्थी

बिज मण्ठेत्था कण्ठमिया, विपसा इण मज्झिमेत्थी ॥१९॥

अण्ण मण्ठे मूट्वा इण, ने उण्ण मण्ठेत्था को जणे ।

अण्ण मण्ठे मण्ठे, कोण्ण चिच्छिद इण्ण कोण्ण मण्ठेत्था ॥२०॥

(कर्मेत्थी मण्ठेत्थी मण्ठे मण्ठे — १०)

अचिन देई मूलादि छुड़ावे,
जारी तो चर्चा मूल न लावे ॥१८॥

सचिन साहाय अनुकम्पा जो होवे,
(तो) सचिन समदृष्टि क्प्याने खवावे ।

जंघा हेतु अणहृता लगावे,
ज्ञानी रे सामे जवाप न आवे ॥१९॥

१०—आधिकार धूपमें पडे हुए जीवाके
सम्बन्धमें ।

तड़के नड़कन जीवां ने देखी,
दया लाय कोई छाया* में मेले ।

अज्ञानी तिण में पाप यत्नावे,
खांदा दांव कुगुरु यों खेले ।

अनुकम्पा सावज मन जाणो ॥ १ ॥

* जैसा कि वे कहते हैं:—

ज्याड़ी जो मेले छाया, बसंततो रो बियावच लागे ।
या अनुकम्पा साधु करे तो, जारा र्पावां हि महाव्रत भागे ।
आ अनुकम्पा सावज जाणो ॥ १८ ॥

भाषति पन्द्रश्रये शत्रु मे,

वीर प्रभु गीतम मे भासे

नर तपे वैराग्ये तपसा,

नेले-वेले वारणां राशे ॥ २ ॥

गुरे भाषण ना लेतां जूवां,

नाय त्याग्या गुरे नोय पडता ।

प्राणां, सून, जाय दया भाय शी,

त्यांने उदाई मायक पाया ॥ ३ ॥

बाण मार्या दया जूवां पर,

नडता गुरे लेखर मयक मेले ।

गौर हा मेव ले पाय वनाय,

दया उदायण माया मेले ॥ ४ ॥

नव ना लिगता विषय केवे,

अनुसन्धा मायक वदि देले ।

अनुसन्धा प्रभु विषय मायां,

दुवेर न्याय गुरा मे मेले ॥ ५ ॥

वीर-अधोदने छाया मे मेले,

असंशय ही त्यायव केवे ।

भेपघारी कहे “साधु मेले तो,
त्यांरा पांचो ही (महा) व्रत नहिं रेवे” ॥ ६ ॥

घतुर पूछे कोई भेपघारी ने,

जूंवां असंजति ने घे पोखो ।

नीचे पही ने पाछो उठावो,

महाव्रत रो धारं रखो न लेखो ॥ ७ ॥

दशनैकालिक चौघे अध्ययने,

व्रसजीवां अनुकम्पा काजे ।

साधुने प्रभुजी विघी बतावे,

मूलपाठ में इणविघ राजे ॥ ८ ॥

उपासरा घलि उपवी माई,

व्रसजीव देख दया दिल लावे ।

रक्षा रे ठामे त्यां ने मेले,

दुःख रे ठाम नहां परठावे ॥ ९ ॥

जीव यचाया जो महाव्रत भागे,

(तो) शास्त्रमें जाजा प्रभु किम देवे ।

‘भारीकर्मा लोगाने भीष्ट करण ने’

दया में पाप मिथ्याती केवे ॥ १० ॥

११—अधिकार अभयकुमारकी अनुकम्पाका

आमण्डलं च तव सेवो करणे,

प्रशरणं महिष पाप्मो कर वेडो ।

पुत्र मंगलि देव ते मामस्थो,

मन एकाग्रह राक्षो भँडो ।

अनुकम्पा मावत मन जाणो ॥ १ ॥

तीती दिन रे कष्ट ममाये,

आमण कल्या देयता देयं ।

तेजा ही अनुकम्पा आई,

एकमात्रो हृषो तव रे सेवो ॥ २ ॥

“अनुकम्पा कर परमायो पारो,”

विद्यापत्नी ० श्री श्री माये ।

अनुकम्पा ना तव हो आई,

इतना ना नाम दिवाडुं ते मन्व ॥ ३ ॥

अहं कामका कामत न्याया,

निर्ही अनुकम्पा हो नाम न अणो ।

इहा नाम मूल हो हरिं,

अनुकम्पा रो घर्म उठायो ॥४॥

(तप) संपनीरी अनुकम्पा करे कोइ,

सनण माहाग पर प्रेम ज लावे ।

उत्तर पैक्रिय कर गुणरागी,

दर्श उमंग घरी देव जावे ॥५॥

दर्शण अनुकम्पा गुण राग तो,

निर्मल श्रीसुत्व जिन फुरमावे ।

वैक्रिय करण जावग जावग रो,

क्रिया तो निण धो न्यारी वनावे ॥६॥

क्रिया योगे गुण-राग न सावज,

निन जगुकम्पा सावज नाहो ।

सांचो न्याय सुणि मूड भडके,

खोटा पक्ष रो नाग मचाई ॥७॥



१२—आधिकार पशु बांधने छोड़नेका

कहे "माणु थो अनेरा प्रमाजोयां ने,

अनुकम्पा थो बांधि ने छोड़े ० ।

बीमारो दण्ड माधु ने आवे,

गृहस्थ ने (गिण) पापरो बन्ध गौड़े" ॥१॥

अनुकम्पा मायज इण लेणे,

अज्ञानी रो पात उपारे ।

'निदिध' पाट रो अर्थ उधांपर,

मोला हुवाया मिथ्या मज्जारं ।

अनुकम्पा मायज मत जाणा ॥२॥

न्याय हुणा किये निदिध पाट रो,

"बंध्युगवद्विया" प्रम जा प्राणी ।

बेला थि व कहे हे

माणु थि अनेरा प्रमाजोयां ने,

अनुकम्पा थो बांधि ने छोड़े ० ।

बीमारो दण्ड माधु ने आवे,

गृहस्थ ने (गिण) पापरो बन्ध गौड़े" ॥१॥

अनुकम्पा मायज मत जाणा ॥२॥

(पृ० ८० १ भा० २३)

हाभमुंज चरमादि रं फांसे,

पांघे न छोड़े मृतर री बाणो ॥३॥

हाभ चाम लकड़ रा फांसा,

साधु रं पास्त में रंवे नाहीं ।

(तो) साधु इण फांसे किम बांघे,

पण्डित न्याय तोलो मनमाहीं ॥ ४॥

चूरणी भाप्यमें न्याय यतायो,

सेजातर रा घर री या बातो ।

जिणरी जानामें साधु उतरिया,

तहां ये जोग मिले साक्षान्तो ॥ ५ ॥

साधु आचार सेजातर न जाणे,

जद वो साधु ने घर संभलावे ।

खोन खला रं कामे जानां,

बांघण छोड़ण पशु री यतावे ॥ ६ ॥

साधु कहे हम बांघां न छोडां,

गृहस्थ रा घर रीचिन्ता न लावे ।

तय तो मुनि ने प्रायश्चिन नाहीं,

बांघे छोड़े तो अनुकम्पा जावे ॥७॥

भाष्य चूर्णी धी मिले ते तो सांशं,

विपरीत तो विपरीत पर्याणों ॥१२॥

'कोशुण वक्षिया' म्हर पाठ रो,

चूर्णी भाष्य धी अर्थ विचारो ।

सांध्या छोड़्या अनुकम्पा न रेवे,

दोष लागे कीतो निरधारो ॥१३॥

कुण कुण दोष पांयण में लागे,

भाष्य, चूर्णी टच्या में देखो ।

जापणी पर री घान ज होवे,

तिणरो पनायां इण विध लेखो ॥१४॥

सांध्या धी पशु पांदा पावे,

जांटी खाय रखे मर जावे ।

अन्तराय सांध्या धी लागे,

तद्धरुहतां अनि ही दुःख पावे ॥१५॥

पर री विराधना या यनलाई,

साधु घान री हिवे सुणो वानो ।

सोंग धी मारेने खुर धी चांवे,

प्रोध चढ्यो करे मुनि री घातो ॥१६॥

करुणा, दया, शान्ति, ऋषि चावे,

निण रो दण्ड मुनी नहि पावे ॥२१॥

अनुकम्पा लायां रो प्राछित केवे,

झूठा नाम सुतर रा लेजे ।

भाष्य, सुतर, चूरणि, दग्धा में,

कडेहि न चास्यो तो पिण केवे ॥२२॥

अनुकम्पा रा द्वेषी घेपी,

झूठा नाम लेना नहि लाजे ।

अज्ञान अंधेरे स्याल ज्यो कूके,

ज्ञान प्रकाश डरकर भाजे ॥२३॥

खाइ में पइनां ने अग्नि में जलतां,

सिंह धो खाता साधू जाणे ।

लाय दया थांवे छोडे तो,

प्राछित नाहीं अर्थ प्रमाणे ॥२४॥

प्राचीन भाष्य अरु चूरणि में,

करुणानुकम्पा करणी घनाई ।

भरतां जाण थांवे अरु छोडे,

इणविधि में कडु प्राछित नाई ॥२५॥

“भोष्य शूरणि” “दृष्ट्वा” री युक्ति,

फयो नहिं मानो ? सृष्टुं यो वेदे ॥३०॥

मन रं मने मगहीणा पाले,

शुद्ध-परम्परा सूत्र ने डेले ।

मात्सी ने तो पावे जरु छोटे,

दृजा जीवां री कृत्युक्ति फयो मेले ? ॥३१॥

सूत्र निशीथ उद्देशे द्वादश,

एणरे नाम धी दृन्द मषाया ।

निण कारण यो में कियो खुलासो,

सूत्र रो सांचो नर्थ घनापो ॥३२॥

जिण वांघ्या अनुकम्पा न रेवे,

तिण रो प्रायश्चिन निश्चय जाणो ।

पांघ्या छोड़्यां जीव पचे तो,

दृष्ट नहीं नजां खँचानाणो ॥३३॥

१३—आधिकार व्याधिमिटावणा विषयक

ज्याचि बहुत कांदादिक सुण ने,

वैद्य अनुकम्पा तिणरी लावे ।

प्राप्तुक औपत्र दुःख मिटावे,

साधू धी दूजा ने साता जो देवे,

पाप लगे अज्ञानी केने ।

नारिभोग दृष्टान्त देई ने,

दुर्गुणि केई मिथ्यामत सेने ॥६॥

नारिभोगे पंचेन्द्रिय हिंसा,

मोह उदेरणा दोनां रं होवें ।

यो दृष्टान्त दया (अनुकम्पा) रं जोड़े,

जो देवे वो भव-भव रोवे ॥७॥

रोग छुड़ावण तिरिया सेवण,

दोनां ने कोई सरीखा केवे ।

त्यां दुर्गुण रो भेद न जाण्यो,

खोटा हेतु कुपन्थी देवे ॥८॥

रोग तो वेदनीं कर्म उदय में,

नारिभोग मोहकर्म में जाणो ।

रोग मिटाया दुःख मिट जावे,

नारिभोग मोह घँषवा रो ठाणा ॥९॥

रोग मिटावामे पाप घणेरों,

नारिभोग समान घतावे ।

जिन जिन देश तीर्थङ्कर जावे,

सौ-सौ कोसां रो दुःख मिट जावे ।

घान (रो) उपद्रव मूल न होवे,

‘ईनि’ मिटण अनिशय यो थावे ॥१५॥

मिरगी रे रोग मनुज बहु मरता,

जिनजी गया मिरगी नहिं रेवे,

लाखों मनुष्य मरण धी घटिया,

मिथ्यानी इणने दुर्गुण केवे ॥ १६ ॥

देश रो सेन्या देशने मारं,

स्ववक्त्रो नृप रो भय थावे ।

ए गुणनीस जनीसे प्रभावे,

भोनि (भय) मिटे जन शान्ति पावे ॥ १७॥

‘पर’ राजा रो सेना जाई,

देश लुटे वो दुःख अनि देवे ।

प्रभु परतापे भय मिट जावे,

नीस अनिशय नृतर केवे ॥ १८ ॥

जति वर्षा बहु जन दुःख पावे,

नदी रो घाटे जन घपरावे ।

“समवायंग सौंकोस” में देखो,

यो हृतान्न तो पाठमें गायो ।

सौं-सौं कोसां उपद्रव टलनां,

केवल ज्ञानी आप बनायो ॥२४॥

टलियो उपद्रव दृगुण जाणा,

ता प्रभुनां रा जोग हूँ दृगुण मानो ।

प्रभु जोगे दृगुण नहि होवे,

तो मिटियो उपद्रव गुगमें यखानो ॥२५॥

आरत छः जीवां रा टले जरु,

प्रभु ऊपर शुद्ध भाव ज आवे ।

परतख लाभ यां दुःख मिट्या हूँ,

प्रभु अनिशय गगवर रुरमावे ॥२६॥

“रायपसेगी” मृतर में देखो,

चित्त “केशीमुनिजी” ने पोले ।

परदेशी ने धर्म सुणाया,

किंग ने गुण होसी विवरो खोले ॥२७॥

दोपद् चौपद् जीवाने बहुगुण,

समग माहाण मिखारी रे जाणो ।

शुद्ध भाव अरु दिन आरम्भ थी,

मुनि यन्त्रा अधिको फल पावे ।

निम कोई रोगी रो रोग मिटावे,

(तो) वैद्यादिक गुण रो फल पावे ॥३३॥

१४—अधिकार साधुकी लब्धिसे

साधु की प्रारणरक्षाका

लब्धिवासी रा 'खिलादिक' हूँ,

सोले रोग शरीर हूँ जावे ।

साधु ने रोग हूँ मरता घटावे,

(तो) ज्यां पुरुषांन भो पाप* घटावे ।

अनुकम्पा सावज मत जाणो ॥१॥

पाप अठारह प्रभुजी भाख्या,

* जंसा कि दे फइतं हे . —

लब्धिवासी रा 'खिलादिक' हूँ,

सोले ही रोग शरीर हूँ जावे ॥

वने जाणे इग रोगा हूँ साधु मरतो,

अनुकंपा बागो नहीं रोग गंवावे ।

आ अनुकंपा सावज जाणो ॥

(अ ३० टा० १ गा० २५)

लखिवारी ने पाप क्यों जायो ॥३॥

उत्तराख्ययन ग्यारवें मांई,

रोगी ने शिक्षा जजोग बतायो ।

लखिवारी रा चरण करत ने,

रोग निव्या शिक्षा गुण पायो ॥७॥

रोग निव्यां गुण चरणकरत गुण,

किणविव जवगुण कुगुठ बतावे ।

गुणमें जवगुण रा थाप करी ने,

निव्यानी पोल नें डोल बजावे ॥८॥

१५—अधिकार मार्ग भूले हुएका साधु

किन कारण रास्ता नहीं बतावे

जदवी रे मांई गुदस्थो भूल्यां,

साधु ने मारग पूछग लागे ।

किण कारण सुनि नाहि बतावे,

“अर्य भाष्य” नें देखो लागे ।

जनुकन्ना सावज मन जागो ॥१॥

सुनि रे बतावे मारग जानां,

चोर कदाचित् उणने लूटे ।

सिंहादिक श्वापद दुःख देवे,

तिण उपसर्ग धी प्राण भी छूटे ।

वा, तिण रस्ते गृहस्थी जानां,

मृग आदिक जीवां ने मारे ।

तिण कारण दयावन्त मुनीश्वर,

मार्ग यत्ताया रो परिचय टारे ।

इसड़ा सूत्र रा सरल अरथ ने,

अज्ञानी तो उलटा मोड़े ।

अनुकम्पा कर मार्ग यनायां,

चार मास चारित्तर* तोड़े ॥ :

“भाष्य चूर्णि” अरु मूल में देखो,

*-जैसे कि ये कहते हैं—

गृहस्थ भूलो ऊजड़ वन में, अरुकी ने बड़े ऊजड़ जावे ।

अनुकम्पा भाणो साध् मागे यनाये, तो चार महीना रो

चाग्नि जावे ॥

वा अनुकम्पा सावज जाणो ।

(अनु० डा० १ गा० २७)

अनुकम्पा रो नाम ही नाहीं ।
 तो पिण अनुकम्पा रा ह्येपी रे,
 झूठ पोळण री लाज न कांहीं ॥ ५ ॥
 तिनकारा मुनि सर्ग जीवां रा,
 अनुकम्पा रो प्राणित नाहीं ।
 समदृष्टि तो सूत्र माने,
 छुगुर री पान देवे छिटकाही ॥ ६ ॥

* प्रथम दाह मन्त्रम् *



अनुकम्पा कारण कोई (गृहस्थ)

सावज करे जो (कोई) काम ।

(ते) कारण अनुकम्पा नहीं,

करुणा (अनुकम्पा) निरवय नाम ॥१॥

सावज कारण सेवनां, वन्दन सावज नांप ।
 अनुकम्पा तिमजानज्यो, निरमल ध्यान लगाय १० ।
 भाषा सुमनी धी करे, वन्दन नो उपदेश ।
 तिम अनुकम्पा नो करे, मुनि रे राग न द्वेष । ११ ।
 गेही पिण समझू हृद्ये, विवेक मनमें लाय ।
 वन्दन अनुकम्पा करे, वैसो ही फल पाय । १२ ।
 कुगुरु कृही खेंच सूं, अनुकम्पा उत्थाप ।
 वन्दन रा नां लोलुपी, जोर सूं मांडे थाप । १३ ।
 कारण कारज भेद ते, कुगुरु खाले नाय ।
 कारण ने आगे करि, करुणा दावि उठाय । १४ ।
 वन्दन कारण प्रगट में, यहुविय जारंभ थाय ।
 कुगुरु देखे तोहि पिण; वन्दन यजे नाय । १५ ।
 रस्ता री सेवा तणो, अनिशय लाभ घनाय ।
 गृहस्थी राखे साथ में, भोजन खाना जाय । १६ ।

दूसरी-ढाल



१—अधिकार जीवां रो दया खातर
दयावान मुनि ने बांधने छोड़ने का ।

(तर्ज—हीवे सामलज्यो नरनार)

हाम मूंजादिक रे फासे,

गाय भेंसादि बंध्या विमासे ।

जो छोड़ं रखे दुःख पासे

अटवी में दोही ने जासे ॥ १ ॥

रखे सिंहादिक घाने खावे;

म्हारी अनुकम्पा उठ जावे ।

अनुकम्पा घणी घट माहीं;

तेथी मुनिवर छोड़े नाहीं ॥ २ ॥

छोड़्या अनुकम्पा उठ जावे,

मुनिजीने प्रायछित आवे ।

इम वशिष्या सूँ तइके पाणो,

रखे मर जावे इसइ जागी ॥ ३ ॥

इण कारण बांवे नाई,

अनुकम्पा घणो घट माई ।

मरता जागे तो बाणे ने खोले,

दोष नाशें अर्थ पूँ पोले ॥ ४ ॥

साधु जन रा पातरा मांहीं,

चिड़ियां उन्दिर पड़ियो आई ।

भेषभारी विण काढ़णो केवे,

विन काढ़या दया नहिं रेवे ॥ ५ ॥

(तो) अनुकम्पा धो छोड़यां पावो,

एहवी खोटो करो किम पावो ।

अनुकम्पा निरवच जाणो,

तिणरा साधु रे नहिं पचखाणो ॥ ६ ॥

साधू पातरा सूँ जीव काढ़े,

तामें धर्म कहे चोड़े-घाड़े ।

मस्ती यदि जीव छुड़ावे,

पाप लागी रो हल्लो उड़ावे ॥ ७ ॥

मस्ती रे मूँज रा पासा,

पशु गंध्या पावे श्रास्ता ।

जो उगने वो नाहिं खोले,

पाप लागे नूत्तर यों पोले ॥८॥

जो खोले तो पाप नूं बचियो,

हुवो अनुकन्या रो रसियो ।

भेष्यारी उलटी सिखावे,

ग्रत्नी (र) छोड़्यां पाप बनावे ॥९॥

तय उन्नम नर कोई प्राणी,

भेष्यारथां ने बाल्यो बागी ।

धारे पानरिक् र मांहीं,

जीव नइक रयो दुःख पाई ॥१०॥

निगने जीवनों काढ़ों के नांहीं

कं मरवा देवो अरांजनि नाहीं ।

कहे जीवनों काढ़ों में प्राणी,

नाहिं काढ़्या पाप लेंवो जागी ॥११॥

साधु नहीं काड़े तो पापी,

या तो ठीक तुमे पिण थापी ।

(जो) जीव छोड़्यां में पाप न लागे,

उत्तर-(कोई) खोले तिण नं पाप यतावे,
 (वलो) घर्म शरघ्या मिश्यातं लगावे ।
 नर यचिपा पाप कहे मोटो,
 जाँरों हिरदो ह्रुवो घणों खोटो ॥ २
 धीवरकल्पी मुनि पिण खोले,
 ठाणाअंग घोभंगी रे ओं
 द्वार खोल याहर निकलणो,
 धीवरकल्पी रा कल्प रो निरणो ॥ ३
 पर री.....अनुकम्पा लावे,
 द्वार खोल्या प्राछित नहीं आं
 अगनी संगटाने मुनि टारे,
 मनुजाँ ने तो साधु उषारे ॥ ४
 पोते तो निकल झट जावे,
 दूजाँ मरताँ री दया न लां
 उणने तो निरदपी जाणो,
 ठाणाअंग रो हे परमाणो ॥ ५
 अनुकम्पा रो दण्ट न आवे,
 ज्ञानीजन परमारथ पाव ।

अनुकम्पा रो दण्ड-धतावे,

अणहूँता ही अरथ उगावे ॥ ६ ॥

भोला ने बहु भरमाया,

कूड़ा-कूड़ा अरथ वताया ।

अनुकम्पा में पाप ने गायो,

हलाहल कलियुग चलि आयो ॥ ७ ॥

अधिकार अपराधीको निरपराधी कहनेका

कोई चोर अने परदारी,

हत्या कोनी मनुज रो भारी ।

अपराधी राजा ठहरायो,

मारण योग्य जगन दरसायो ॥ १ ॥

वधवा योग्यने 'धध्या' कहावे,

"वज्रसापाणा" पाठमें गावे ।

मुनि मध्यस्थ भावना भावे,

जैसा कि वे कहत हैं ।

अनुकम्पा कृपा दण्ड पावे पन्नास्य गित्त पावे ।

निरापद्ये शरयो दहंशे. नि न शप्ते दपारो रेन्तो ॥

१ अनुकम्पा २ दान ।

जाने ज्ञानी न्याय वनावे ।

मतमार मुनि नित केवे,

तेथी "माहण" पद प्रभु देवे ॥ ७ ॥

मतमार कछ्याँ पाप नाहीं,

भव्य ! समझो हिरदा रे माँहीं ।

'मतमार' में पाप जो केवे,

मिथ्यामन रो पद वो लेवे ॥ ८ ॥

साधु धी अनेरा जो प्राणी,

थापे हिंसक खँचानाणी ।

चाने मत मारण नहि केणो,

ये कुगुरु तणा छे वेणों ॥ ९ ॥

जगजीव राखण रे काजे,

सन-शास्त्र कछ्या जिनराजे ।

प्रश्नव्याकरण सूत्र देखो,

संवरद्वारे, कछ्यो जिन लेखो ॥१० ॥

चार भावना मुनि नित भावे,

ते थी संवर गुण वढ जावे ।

मैत्री प्रमोद करुणा जाणों,

मर्यादा शीघ्री.....यत्नागो ॥ ११ ॥

सैत्रिमाण मनी ये लावे,

मुनिजन से हर्ष बढ़ावे ।

वशा कृत्वा-जीवों से लावे,

गथा योग्य मिटायण लावे ॥ १२ ॥

लोट्टा-कर्म करे कोई जाणा,

बोरो जारी जा हया मन आणा ।

त्रिमक कूर-कर्म से कारी,

देवे दुःख जगल ने भारी ॥ १३ ॥

पदा कृष्ट देणे मुनि प्राणी,

मर्याद भाव लावे गुणप्राणी ।

प्राण योग्य गेहो नहि चाले,

“अवज्ञा” “बचन” नहि चाले ॥ १४ ॥

बाधा योग्य करे निम जानी,

अवमान हे मत्रा शृण्व दानी ।

अज्ञाना (न) अनात्मन निम बने,

लोक विष्ट करे निम घेने ॥ १५ ॥

एव मर्याद मन्त्रा ज्ञानी,

दणरो सुगशअंग दखाणो ।

दुष्ट जीवो रो यहाँ अधिहारो,

अध्ययन पौख्ये ज्ञानो विहारो ॥ ६६ ॥

ऊँया अरथ करी भ्रम पाहे,

नाथे मिथ्यामन रो खाहे ।

“बाहें माधु धी अनेरा प्राणो,

जाने हिंसक लेयो जाणो” ॥ ६७ ॥

(बाहें विजने) मन्मार बाहें उण रो गणो,

नाजे कतणे हिंसा लागी ॥

‘मन्मार’ जाँव नहि बेणो,

ऐसा कुनवि पाहे बेणो ॥ ६८ ॥

तिने मूद्र प्रमाण विद्याणो,

सभा जाँव दुष्ट मन जाणो ।

क्षुद्र जाणो रो पालरो होया,

“दाणापंग” मूत्र में देखो ॥ ६९ ॥

क्षुद्रिब. अधम बाधा प्रणो,

ए मूद्र बाधा उजरो जाणो ।

आगन्तो विरुध संसेणो,



(तो) भद्रिक अर्थ री होवे हाणी ।
 तिम हिंसक सर्व नहिं प्राणी,
 अति-दुष्ट हिंसक लेवो जाणी ॥ २५ ॥
 बघ्याने बघ्या न बघ्यावे,
 निरदोषी कष्टा दोष आवे ।
 या मध्यस्थ भावना भाई,
 दुरगुण री उपेक्षा बघ्याई ॥ २६ ॥
 करुणारी घात यहाँ नाई,
 “सुगडाअँग” टोका रे भाई ।
 इणरो अँघो अर्थ केई ताणे,
 ‘मतमार’ में पाप बखाणे ॥ २७ ॥
 नाम सुगडाअँग रो लेवै,
 खांटी जुगत्यां मन सँ देवे ।
 तिण हेत कियो विस्तारो,
 शुद्ध-भ्रद्धा धो हँ निस्तारो ॥ २८ ॥



४-अधिकार जीवणा मरणा वांछणेका

जीवणो आपणो मनमें आनी,

भोजन-पान करे शुद्ध ज्ञानी ।

उत्तराध्येन छषीस रे माँई,

छे कारण में पान या आई ॥ १ ॥

जो बिन अवसर अन्न त्यागो,

(तो) आत्महत्या मुनिने लागे ।

जीवन हेतु आहार रो करणो,

सूत्र में कोनो यो निरणो ॥ २ ॥

अयसर जाण मरण रे काजे,

तजे आहार धर्म शुद्ध साजे ।

पों जीवनो मरणो चाये,

पाप न लागे सूत्र पनाये ॥ ३ ॥

राजमनी रहनेमीने भाये,

बिक्कार तू जीवन राखे ।

मरणो तुझने श्रेयकारी,

धर्म लांभ हृये तुझ भारी ॥ ४ ॥

अज्ञानी अनुकम्पा धी भागा,

जँघा अरथ करण यूँ लगा ।

“आपणो जीवणोः साधू वंछे,
(तो) पाक-कर्म रो होवे संवे” ॥ ५ ॥

करुणा धो परजीव यचावे,
निणने पाप सँताप लगावे ।

इणमें साख सँधारा रो देवे,
जँघा अरथ सँ दुरगति लेवे ॥ ६ ॥

पूजा-श्लाघा सँधारा में देखो,
जीवणो चावे कोई विशेखो ।

अतिचार सँधारा रो भाख्यो,
पिण नहिं अनुकम्पा रो दाख्यो ॥ ७ ॥

महिमा पूजा नहिं पावे,
तथा कष्ट शरीर में जावे ।

तय मरण आशंसा लावे,

जेते कि वे ० हने हैं ।

आपणों वंछे तो ही पापो, परतो पुन घाले संतापो ।
मरणो जीवणो वंछे आझानो, समभाय राखेंते सुझानो ॥

(अ० ढाल २ गाथा ४१)

भोला ने नाखे सखशोले

उपद्रव मिटण कोई चावे,

निण मॉटों हे पाप यतावे ॥ ३ ॥

“संवरद्वारे” जिनजी भाख्यो,

‘खेमंकर’ मुनिगुण दाख्य ।

उपद्रव मेटे ते खेमंकर,

ते जीवों रो जाणो हितंकर ॥ ४ ॥

श्री वीर रा गुण इम भाखे,

आदर कुँवर गोशाला ने दाखे ।

अस-थावर (रे) खेम करंता,

शान्ति करणशाल भगवन्ता ॥ ५ ॥

पर-उपद्रव मेटण चावे,

निणमें तो पाप न थावे

शोन तापादि उपद्रव कोई,

निज पे आयो मुनि लियो जोई ॥ ६ ॥

होवो-भनहोवो मुनि नहिं केवे,

आरत-ध्यान जाण मौन रेवे ।

आरत-ध्यान रो तीजो भेदो,

रोग आर्ग्य करे कोई लोदी ॥ ७ ॥

रोग से वियोग जां चाये,

आरत ध्यान प्रभूती बलाये ।

आर मुनिर्गं से रोग मिटाये,

से तो आरत नहिं कटाये ॥ ८ ॥

निम पर-उपद्रव से जाणो,

याव केये ता कुमनि पिछाणो ।

उर्ग बन्दना मुनि नहिं चाये,

चाये ता दूषण पावे ॥ ९ ॥

या आपणा आमहि जाणो,

'मृगशापंग' मृत्र पिछाणो ।

कांठे बन्दना मुनिने दूषे,

दूष निगमं मृत्र नहिं केये ॥ १० ॥

'भेष' निरुपद्रव निम जाणो,

पर हा बंधुया म दूष से टाणो ।

भेषंकर मृती गुण बहिंये,

से बंधुया दूष विम लहिंये ॥ ११ ॥

६—अधिकार नौकाका पानी बतानेका

साधू पैठा नावामें आई,

नावड़िये नाव बलाई ।

नाव फूटी भाँय आवे पाणी,

उपरा-उपरी जल सँ भराणी ॥ १ ॥

जाना पानी पतावा रो नेमो

तेयो हुनी पतावे केमो ।

जबसर दूषण केरो जावे,

जननासे निकल मुनि जावे ॥ २ ॥

विनिमे उतरया नहिं घाट,

“जाहारियंरियेजा” पाठ ।

जनना सँ निकलने जाणां,

दूषजाने रो नहिं पखागो ॥ ३ ॥

एवा सरल-अर्थने छोड़ी,

खीटां शर्यां सँ श सँ जोड़ी ।

(कहे) “भनुज पचापा पापो,

तेयो (मुनि) जल न पतावे जापो ॥

नो इमहिज सनझो रे भाई

पर रो अनुकम्पा धर्म रे माई ॥ ९ ॥

मनुजाने दवाया में धर्मो,

यो द्राणायङ्ग रो मर्मो ।

निज (अनुकम्पा) काजे न पाणी दनावे,

(निम) परकाजे पिग नाहिं दिखावे ॥ १० ॥

पाणी दनावा रो कल्प नाहीं,

मनुजरक्षा धर्म रे माहीं ।

जीव यक्षियां न व्रत में भङ्गो

‘निण रो माखी जाचारङ्गो’ ॥ ११ ॥

“अनुकम्पा किणरी न करणी” *

ऐसी जाचारंगे न वरणी ।

शंका होवे तो मृतर देवो,

नाव रो दनायो जेट लेखो ॥ १२ ॥

* द्वितीय दाल सन्पूर्णम् *

० जैने कि वे कहते हैं:—

आप डवे अनेरा प्राप्तो

अनुकम्पा किणरी नाहिं आतो ।

। अनु० दाल २ गा० २६।

तीसरी-ढाल



१ अधिका मेघरथ राजाका परेवा
पर दया करनेका ।
(तर्ज—विछिया नी)

इन्द्र करी परसंसिया,

मेघरथ मोटो महाराय—रे जीवां ।

दयावन्न दानेश्वरी,

शरणागत देवे महाय—रे जीवां ॥ १ ॥

मोह अनुकम्पा न जाणिये,

नहिं मोह तणो यह काम—रे जीवां ।

परकाश अन्धेरा ज्युँ जुवा,

दोयां रा न्यारा नाम—रे० मो० ॥ २ ॥

तिण काले एक देवना,

दयाभाव देखण रे काज—रे जीवां ।

रूप परेयो षाज नो,
 तिण कीनो वैकिय साज—रे० सो० ॥ ३ ॥
 पड़ियो राय री गोद में,

भय धी तड़के तस काय—रे जीयां ।
 धारणो दियो महारायजी,
 भय मनपावो कहि पाय-रंजीयां, सो०॥४॥
 षाज कहे भल माहरो,

मुझ मूला नो यह णिकार—रे जीयां ।
 और कछु लेखुँ नहीं,
 मोने आपो मारो आहार-रे० सो० ॥ ५ ॥
 यो शरणागत माहरे,

और मांग तू वधु रदाल—रे जीयां ।
 जे मांग ले आपसुँ.

हुँ जीवदया प्रतिपाल-रे जीयां, सो० ॥६॥
 मांस आपां निज देह नो,
 इगरे बराबर तोले—रे जीयां ।
 दर्पित हो गाय इम कहे,
 यह तो भयो कसो धेँ पाल-रे जीयां, सो०॥७॥

तुरत तराजू मांड ने,

राय खण्डन लागो काय—रे जीवां ।

हाहाकार हुजो घंगो,

अन्तेवर जति विलखाय—रे जीवां, मो० ॥८॥

उत्तर दीधो राजवी,

नहिं मोह तणो यदां काम—रे जीवां ।

क्षत्री धर्म छै महारो,

धर्म राखे छे धारो स्वाम—रे जीवां, मो० ॥९॥

सब समझाया ज्ञान न्हं.

विलखाया नामा जाय—रे जीवां ।

इमडां धना जगतमें,

हुजो वरी हांसा कां रे जीवां मो० ॥१०॥

निज ना मरणा वांछया.

ने ना जागा धने रा कान—रे जीवां ।

प्राग कपोत रा मग्विया.

ने शुद्ध यमो नान—रे जीवां मो० ॥११॥

तन गंदरो मन गंदरो नदीं.

जहग जाग्या राउ रे जीवां ।

देव बोले इण पर वाय-रे जीवां ।

जनुवन पांचो निर्मला,

दया-धर्म धारं चित्तवाय-रेजीवां, मो० ॥१॥

वन तोड़ हिंसा करती नहीं

जनुकन्या न छोड़ती जाज-रेजीवां ।

(जाव) धर्म न छोड़ती ताहरो

तो हूँ करतूँ मोटो जकाज-रेजीवां मो० ॥२॥

यवन सुणी डरियो नहीं

इम चित्तवे चित्त सुझार-रेजीवां ।

धर्म घोव इणरं नहीं

तेथी पाप करण झूझार- रे जीवां मो०॥३॥

सुननि नजी कुनती भजी

तेहथी धर्म छुड़ावग वाय-रेजीवां ।

मैं मर्म जाण्यो छै एहनो

तेथी धर्म छोड़्यो किन जाय रे जीवां मो०॥४॥

पाप है घानक जगनमें

दुःख देवे करे जकाज रे जीवां ।

जगवच्छल जिन-धर्म है

मरतो नहिं राख्यो एक—रे जीवां मो०॥८॥

एहवी अणहूँ ति धान उठायने

अनुकम्पानें थापे पाप—रे जीवां ।

जारें मोह उदे अति आकरौ

तेहथी खोटी करे छे थाप—रे जीवां मो०॥९॥

झाझ राखण धर्म छोड्यो नहीं

तेहथी मोह करुगा री थाप—रे जीवां ।

त्यानि बुधवन्त कहें इण परं

इक हेतु रो देवां जान रे जीवां मो०॥१०॥

“रावण सीताने कहें

तुं सुजन न करे र्वाकार—रे जीवां ।

तेथी मरसे नर आनि नासटा

धारं नहिं दयाहं प्यार रे जीवां मो०॥११॥

दया धर्म सुख मन धरयो

हैं तां नगला रो चाहें नंस रे जीवां ।

धारं हिरदे खोटी वानना

न्यारे हिरदे त्यांचो नंस—रे जीवां मो०॥१२॥

शील न सीता र्वाण्डयो

जीव रक्षा धर्म रे माँय—रे० मो० ॥१७॥

कोई देव कहें आवक भणी

तू दे जिन धर्मने छोड़—रेजीवां ।

नहिं तो साधवी गुल्मी नाहरी

जारो शीलने नाखसूँ नोड़—रे० मो० ॥१८॥

धर्म न छोड़े तेहथी

कोई मूर्ख उठावे भरम—रे जीवां ।

शील धवापामें पाप हें

तिणरे हेते न छोड्यो धर्म—रे० मो० ॥१९॥

(धलि) देव कहें धर्म न छोड़सी

झूठ चोरी रो करस्यँ पाप -रे जीवां ।

तय धर्म न छोड़े तेहथी

कोई मूढ़ करे एहवी धाप—रे० मो० ॥२०॥

धर्म त्याग चोरी न हुड़ावनां

चोरी झूठ छोड़ावा में पाप -रे जीवां ।

या मूर्ख री परूपणा

इम ज्ञानी जाणेसाक रे ०मो० ॥२१॥

इम अठाराही पाप रो

छोड़ो धर्मने भेष रो लाज—रे० मो० ॥२६॥

३—अधिकार “माता वचानेसे चुलणी-

पियाके व्रतादिका भंग नहीं हुआ

वरणक नी परे जाणज्यो,

चुलणीपिया नी घात—रंजीवां ।

पुत्र मार तूला कर छांटना,

अनुकन्या राखो साक्षात—रंजीवां मो० ॥१॥

अपराधीने नहिं मारणो,

कीयो पोसा माहीं नेम—रंजीवां ।

तेथी पुत्र रा मारणहार पे,

अनुकन्या राखी घर प्रेम—रंजीवां मो० ॥२॥

भूइमनी उलटी कहें,

जारें दया नहिं दिल मांय—रंजीवां ।

करुणा न की अंगजान नी,

एवी खोटी योले वाय—रंजीवां मो० ॥३॥

जो देव इणी विघ घोल तो,

धारा पुत्र यचायामें धर्म—रंजीवां ।



इम सुण चुलणीपिया कोपियो,

यो तो पुरुष अनारज धाय—रेजीवां ।

पकडं, मारुं एहने,

इम चिन्ती लारे धाय—रेजीवां मो० ॥१॥

देव गयो आकाश में,

इणरे धाँवो आयो हाथ—रे...

कोलाहल कीधो घणो,

तव आई भद्रा मान—रेजीवां ,मो० ॥ १० ॥

वच्छ ! विरूप देख्यो तुमे,

नहिं हुई पुत्राँ रो घात—रेजीवाँ ।

पुरुष भारण तुम ऊठिया,

व्रत-नेम भागा साक्षात—रेजीवाँ, मो० ॥११॥

इहाँ झूठा घोला इम कहें,

जाँरे नहिं अनुकम्पा सँ प्रेम—रेजीवाँ ।

“अनुकम्पा करी जननी नर्णा,

ते सँ भागा व्रत नेम”—रेजीवाँ, मो० ॥१२॥

घेटा हो इण पर कहें,

मिथ्यात रो चढ़ियो पूर—रेजीवाँ ।



जनुकम्पा थी घन भागा कहे,

ते बूड़ा काली-धार—रे जीवां ।

यली भोला ने भरमाय ने,

पकड़ डुयपो लार—रेजीवां, मो०॥१८॥

“भगवण भगनियन” रो,

बलि “भग पापय” रो अर्थ—रेजीवां ।

टीका में कियो इण भौन थो,

पें खेंच करो क्यो व्यर्थ—रे जीवां, मो० ॥१९॥

कोप करी ने दोड़ियो,

पुरुष मारण रे परिणाम—रे जीवां ।

जनुघन भागो तेहथी.

करुणा न रही निग ठाम रे जीवां. मो॥२०॥

अपरार्थी पिग नहिं मारगो.

या पापय रा मर्याद रे जीवां ।

भाव हुवा मारण नगा.

घन भागो नजो हटवाड रे०मा० ॥२१॥

क्रोध करण रा न्याग था.

पगय पर जायो हांप—रे जीवां ।

शूरादेव श्रावक तणी,

चुलणीपिया सन वात—रेजीवां ।

देव कष्ट दियो पुत्राँ तणी,

तिनमें विशेष छे इण भाँत—रे० मो० ॥२३॥

जो तूँ दया-धर्म छोडे, नहीं,

तो धारी देह रे माँय—रेजीवां ।

सोले रोग में घाटसँ,

तूँ मरने दुर्गत जाय—रेजीवां, मो० ॥२४॥

इम सुण कोप थी दोडियो,

चुलणीपिया सन जाण—रेजीवां ।

व्रत-नियम भागा कल्या,

ते सनझ ने तज दो नाण—रेजीवां, मो० ॥२५॥

पोषा सानायक में तुमें,

एवी करो छो थाप—रेजीवां ।

देह रक्षा किया भागे नहीं,

जागार कही तुम साक—रे० मो० ॥२६॥

६ जैता कि वे "श्रावक धन-विचार" में श्रावक
को सानायिक व्रत को डालने कहते हैं: -

तुम कपने शूरादेव रे,

देह रक्षा थी भागा न घत—रेजीवां ।

हीचे अनुकम्पा किणरी करा,

तिण थी भागा इणरा घत—रे जीवां, मो० ॥१०॥

इण कपने रें जानलो,

बुलणीपिया नी (पिण) घात—रे जीवां ।

जननी अनुकम्पा धकी,

नहिं हई घत री घात—रे जीवां, मो० ॥११॥

गरीर कपटादिक तेहना,

जतन करे सामाएक मांयत्री

लाय बोरादिक रा भय धकी,

एकान्त न्यानुक जयणा ने जायत्री ॥२४॥

बापरो तो आगाए राखियो,

झीग रो नही छे आगाए जी ।

झीग ने त्याग्या सामाई सुभे,

त्यां ने किणविध छेजाये बहार जी ॥

मिन्नात्रा घत धाराधिये ॥ २७ ॥

लाय बोरादिक रा भय धकी,

बाप्या ते दृश्य छे जायत्री ।

हिंसा करण ने दोड़ियो,
 षली ढोघ आयो निगवार—रे जीवां ।
 अजतना व्योपार थी,
 व्रत नेम पोषव टूटी कार—रे० मो० ॥ ३२ ॥
 व्रत भागे हिंसा धकी,
 यो निश्चय लीजो जाण—रे जीवां ।

पाखती कपड़ादिहः दुवे घणा ।

त्यां ने तो बाहर न ले जावे तायजी ॥ २ॢ ॥

राण्या ते द्रव्य ले जावता,

समाई रो भंग न धायजी

त्यागा छे त्यां ने ले जावता,

सामायो रो व्रत भाग जायजी ॥ २ॣ ॥

ग्यारहवें व्रत की ढाल में भी लिखा हैः—

पोषा ने सामायिक व्रत ना,

सरखा छे पञ्चखाणजी ।

सामायिक तो मुहूर्त एकनी,

पोषो दिवसरात रो जाणजी ॥ ७ ॥

पोषा ने सामायिक व्रत में,

यां दोयां में सरखो छे आगारजी ॥ ॢ ॥

महल अन्तेवर ताहरा,

अगनि में बले परतख—रे जीवां ।

तुम स्वामी छो एहना,

ज्ञानादिक नी परं (याने) रख—रे० मो० ॥ ४ ॥

तय, नमीकपिजी इम कहे,

ज्ञानादिक गुण छे मूझ—रे जीवां ।

एथी पीजी बल्लु नहिं माहरे,

निश्चय-नयरी घनाई मूझ - रेजीवां. मो० ॥५॥

मुझनो ते तो बले नहीं,

बले ते न न्हारो होय रे जीवां ।

यह मिथिला बलना थकाँ,

ज्ञानादिक नाश न होय रे जीवां. मो० ॥६॥

वेई अज्ञानी इम कहे,

अनुकम्पा री एरवा घान रे जीवां ।

“नमीराज कृपि जाणो नहीं,

मोह अनुकम्पा री घान”—रे जीवां. मो० ॥७॥

(उत्तर) अनुकम्पा री घटन छे नहीं.

नहिं उतर में तेनी घान—रे जीवां ।

थौं झूठा गाल यजाविया,
थौरै मोह उदय मिथ्यात—रै जीवां, मो० ॥८॥

(जो) अन्तेवर रक्षा ना करी,

तेहथी अनुकम्पा में पाप—रैजीवां
एधी करे कोई थापना,
तो उत्तर सुणजो साक—रै जीवां, मो० ॥ ९ ॥

हिंसा, झूठ, चोरी तणा,

नमी (जी) न करावे त्याग—रै जीवां ।

बस्तर पिण राखे नहीं,

संग में न रहे महाभाग—रै जीवां, मो० ॥१०॥

निज हित में तत्पर रहे,

पर साधु रो न करे काज—रै जीवां
प्रत्येकपोधी मुनि निके,

पर रो न बंछे साज—रै जीवां, मो० ॥११॥
या प्रत्येकपोधी रो नाम ले,

कोई मूर्ख करे एहधी थाप—रै जीवां ।

जो कार्य नमोक्तधि ना करे,

तिग में मोहतगो छे पाप—रै जीवां, मो० ॥१२॥

इण लेखे (नो) दीक्षा इण नें,

बलि विविध करावण नेम - रे जीवां ।

ते मोह पाप नें टहरसो,

तेने ज्ञानी तो माने केम रेजीवां, मो० ॥१३॥

दीक्षा, त्याग, व्यावच तणा,

यां कार्य नें दोष न कोय - रे जीवां ।

तिम परजीव रक्षा नें जाणज्यो,

धीवरकल्पीकरे सय कोय - रे० मो० ॥१४॥

जिणकल्पी प्रत्येकबोधि नो,

जिण कामां रो कल्प न होय रे जीवां ।

त्यारें देखा-देखी कोई ना करे,

निर्दयी समझो सोय रेजीवां, मो० ॥१५॥

ठागायंग नें भाषियो.

कृत्वा तणो जधिकार रे जीवां ।

(बली) छनी शक्ति व्यावच ना करे,

याँवे महा मोहणी रो भार - रे० मो० ॥१६॥

धीवर कल्पी रा कल्प रो,

जिन एहवो भाष्यो मर्म रे जीवां ।

शमस्ताणे काउत्तरा कियो,
 सोगल आयो तिहाँ चाल रं जीवां
 नाये पाल बाँधी मादी तणी,
 माँई घाल्या खीरा लाल - रं जीवां, मो० ॥३॥
 कष्ट सथो वेदना खनी,
 मुनि मोक्ष गया तिणवार - रं जीवां ।
 वेई मंदमती तो इम कहै,
 'नेम करुणा न करी लिगारः - रं० मो० ॥४॥
 पहले अनुकम्पा आणी नहीं,
 और साथु न मैल्या साथ रं जीवां ।

० जैता कि वे कहते हैं: -

कष्ट सथो वेदना अति घनी,

नेनी करुणा न करी लिगार रे ॥ १८ ॥

धी नेमि जिनेवार आणला

होनी अनुकम्पा नो घनी रे ।

परिने अनुकम्पा आणी नहीं

और साथु न मैल्या साथ रे ॥ १९ ॥

झूठा बोलता सरनो नाय—रे० मो० ॥११॥

जय ज्वाय न आवे एहनो,

जाहा-जबला गाल बजाय—रे जीवां ।

स्लेच्छ शस्त्र खुटा थका,

ईंगर धो टोल गुहाय—रेजीवां, मो० ॥१२॥

पार्श्व-ग्रभु दीक्षा ग्रही,

कालसग कियो वन नाय—रे जीवां ।

जय कमठे मेह परस्तावियो.

उपसर्ग दोनो जाय—रेजीवां, मो० ॥१३॥

तय घरणेद्र पद्मावती,

सनाजं लोहं ध्र व र र ।

इशानादिक इत्यादि

(अनु० ट ० ३ का० १)

० जैला कि धे फले ह.

दुःख देता देया भगवान ने

अन्तमा न फाथा आर रे ।

एनहाए देय हुंला वना

पिय कियती न फाथा लगर रे ।

(अनु० ट ० ३ का० २३)

श्रीमती अमर कुमर बली,

भोल सेठ आदिक नी घात— रेजीवां ।

देव साय करी (तुमे) मानो खरो,

विच पड़िया ये सक्षात्—रेजीवां मो० ॥१६॥

यह था सम-दृष्टि देवता,

ब्रिह्म-धर्म दिपावणहार—रे जीवां ।

नवकार महिमा कारणे,

संकट मेट कियो उपकार—रे० मो० ॥१७॥

कियो कनक-सिंहासन तत्पेया ।

रुपर अमर कुमर प्रति पैसारं,

इम जाण जपो धी नवकारं ॥ ८ ॥

बछड़ा चरावतो जिहवारं,

नदी पूर जाया गुण्यो नष्टहारं ।

यह ततखोण सरिता दोर डारं,

इम जाण जपो धी नवकारं ॥९॥

सेठ नमुद्र में डवतो,

नवकार गुण्यो घर चित्त शान्तो ।

सुर नडाज उठाय मैली पारं,

इम जाण जपो धी नवकारं ॥१०॥

उपसर्ग मेढ्या न्नाक्षान—रे जीयां ।

तुम कयने पिग हुवो धर्म यो,

मान लेवो छोड़ मिध्यान—रे० मो० ॥२१॥

“तो सय उपसर्ग धोरना,

देव केम न मेढ्या आय” —रे जीयां ।

एयो शंका कोई करं,

जारे सुव-सुव हिरदे नाय—रे० मो० ॥२२॥

निद्रेयादी अवशिष्टा.

मिदना देव्या निज ज्ञान—रे जीयां ।

(ते) विद्यन मेढ्या देयां हर्ष सुं,

धर्म मेवा नो दे शुभ प्यान—रे० मो० ॥२३॥

जो होनहार टले नतीं.

ते देव न सके टार—रे जीयां ।

खीरो नाम नो यो मृदमता.

(उपसर्ग) मेढ्यां पाद अरान— रे०मो० ॥२४॥

सो थोसरी उपसर्ग ना तावे.

जिन मतिना मुचर नाय—रे जीयां

होनहार गोनारे कोर दे.

न्यानि डोष घगो कलगा तगो,

वदय जायो निध्यान रो पाप—रे जीवां ।

तेयो जनुकंपा में पाप छे,

एवो (कोई) मंड करे डे थाप—रे० मो० ॥२॥

त्यानि ज्ञानो कइ समझायवा,

इन्द्र जे-जे न करे काम—रे जीवां ।

निग में पाप कइ नो विचार लो,

कइ काम रा लेई नान—रे० मो० ॥३॥

श्रीकृष्ण नरेश्वर महामनी,

जाँए पहडो दीनो किराय—रे जीवां ।

जो दीक्षा लेवो श्री नेन पे,

मैं पिउला रो कल सहाय—रे० मो० ॥४॥

सहस्र-शुद्ध संयम लियो,

यो परतत्व महा-उपकार—रेजीवां ।

पिन इन्द्र पहडो केवो नरी,

निगरो बुबबन करो विचार—रे० मो० ॥५॥

जो इन्द्र काम कियो नरी,

निगलै कृष्णने कइ (काई) पाप—रेजीवां ।

सावध ने निरवध बली,

अनुकंपा रा भेद दोय—रे जीवां ।

इन्द्र कया नहिं तुम भणो,

धें भाखो कयों निबुध होय—रे० मो० ॥११॥

तय तो छटके घोल दे,

म्हारे इन्द्र सँ काई काम—रे जीवां ।

॥ म्हें सूत्र से करौं पल्पगा,

म्हारा गुराँ रो राखाँ नाम—रे० मो० ॥१२॥

तो समझो रे नमझो जरा,

अनुकम्पा न सावध होय—रे जीवां ।

॥ सूत्र में न भान्यो केवयो,

चलि इन्द्र कयो नहिं तोय—रे० मो० ॥१३॥

अणहुँ नी घान उटायने,

मत करो अनुकम्पा रा घान—रे जीवां ।

इन्द्र रो नाम लेई-लेई.

मन कर्म पाँयो नाझान—रे० मो० ॥१४॥



याने पहला पिंग बज्या नहीं,

जागता था संग्राम में घान—रंजीवां ।

युद्ध मिटाया पाप है,

तेयो कही न भेटग घान"—रे० मो० ॥३॥

(उत्तर) भोला भरमावग तगो,

यो तो परतल नाँदो फन्द—रंजीवां ।

झानी पूछे तेहने,

तप सुखडो हो जावे फन्द—रे० मो० ॥४॥

जो युद्ध भेटग घोर ना गया,

ते ना बीडी का जाला बरतार—रे० मो० ॥ ५० ॥

फनी अनुकरन जालता,

का लीं बिकाने झारने ।

सुखनी ने सारा उरनरन,

एत ना घोर ने से दगा बरतार—रे० मो० ॥ ५१ ॥

बीचक भल भानजन क

घोरों सारक ना घान रे

एत भोला झण्ड ने सारा दगा

ने बिल बिद लारक दगा—रे० मो० ॥ ५२ ॥

(अनुकरन काल ३१)

वलि सायु न मैल्या साय"—रे० मो० ॥१॥
 तो इमहिज नमजो भाव थो,
 संग्राम नेटण में घर्म रे जीवां ।
 न्याय रीत समझाविया,
 शान्ति हुए न बन्दे कर्म—रे० मो० ॥१०॥
 सब जीव खेमकर वीरजी.
 "सुगडायंग" माँय देखे--रे जीवां ।
 भय भेदे सब जीव रा,
 जभयंकर विरद विरोखे--रे० मो० ॥११॥
 भगवन्त विचरं देश में.
 सौं-सौं कोमाँ रे माँय--रे जीवां ।
 मनुष्याँ रे उपद्रव ना रहे,
 पिण होजो तो मिटे नाँय रे० मो० ॥१२॥
 तिन चेहा-कोमिन संग्राम में,
 न्याय मिटाया माँटो-धर्म रे जीवां ।
 मिटनो न देख्यो ज्ञान में,
 प्रभु ना गया समझो मर्म--रे० मो० ॥१३॥
 मनुकम्पा ल्ठापवा,

भूखा राम्हे भोजन ना दिये,

आवक होयें दया हीण—रे जीवां ।

साधु आहार न देवे गृहस्थ ने,

ते तो कल्प राखण परधीण—रे० मो०॥१७॥

‘साधु-आवक दोनों तणी,

अनुकम्पा प्रवृत्ति एक’—रे जीवां ।

एधो (केई) करे प्ररूपणा,

उत्तर पूछ्यां पलटता देख—रे० मो०॥१८॥

साधु उपधि में उलझिछा,

उंदरादिक जीव जाण—रे जीवां ।

(साधु) अनुकम्पा आणी नै छंड दे,

नहिं छंड्या थी होवे हाण—रे० मो०॥१९॥

गेहो (गृहस्थ) रे रस्मीमें उलझिछा

गायादिक प्राणी जाण—रे जीवां ।

गेहो दयासे छंड दे,

नहिं छंड्यां थी होवे हाण—रे० मो०॥२०॥

धर्म बनाये साधने,

गेहोने बनाये पाप—रे जीवां

फर्क पड्यो किण कारणे

खोटी श्रद्धा दीखे साक—रं० मो० ॥२६॥

“साधु श्रावक ही एक रीत छे”

मूंडा धी बोलो एम—रं जीवां ।

दोनो सरीखा काममें

तुमे फर्क बनावो केम—रं० मो० ॥२७॥

जीव मरे साधु योग धी,

गृह्य बनाया धर्म—रं जीवां ।

गेही गेही ने जीव बनाय हे

निणमें तो बनावो जधर्म—रं० मो० ॥२८॥

जीव बच्या दोनो जगा

दोनो रा डलिया पाप—रं जीवां ।

इन दोनो सरिखा काममें

डलट पलट करे खोटी धाप—रं० मो० ॥२९॥

धर्म बनावे एकमें

दुजामें बेवे पाप—रं जीवां ।

यो कुटिल-पन्थ बुगुरां तणो

धर्म धन्य दालन लपो, शानो करे उवाच ।
 उपदेशो अह माज धी देवे कष्ट हुदाय ॥४॥
 माधु बन्ध धी माधुर्जी, गुहाय धन्य धी गुह्य ।
 मांघ आरुह मित्राय ने, मन्तोधी करे म्पथ ॥५॥
 दुग्ध मेटण मे मन्दर्मान, पापधन्य हनदाय ।
 अमंजनी गी नाम ले, म्पोंटा पोंज ल्पगाय ॥६॥
 माणवालो अमंजनी, अमंजनी माणयो जाय ।
 एक देवे महादेदना, एक (महा) दुग्धे घपराय ॥७॥
 आग्नि म्पे ध्यान धी, दोनों पांथे पाप ।
 पाप टलावे देहना, ने ज्ञानो मन साक ॥८॥
 (कते) "हिंसक पाप हुदाय दां, मरे ने भुगनो कर्म ।
 दुग्ध मेटे काई नेहना, नं नदि मानां धर्म" ॥९॥
 या श्रद्धा कुमुद नगी, मिथ्या जाणो साक ।
 मन मुक्ती माने नही, उदय मोहना पाप ॥१०॥
 जीव यथाथा उपर, खाटा देवे न्याय ।
 (ने)पुक्ति धी म्पण्डन किया, मिथ्या-नम मिट जाय

चौथी ढाल ।

(कहे) “नाइो भरियो हो डेंडक माछला,
निण पर भेंस्यो आयो बलाय हो भविकजन ॥
तिणने हंकात्या दुःख थो मरे,
नहीं हंकात्या मरे तसकाय हो भविकजन ॥
करो परिक्षा सन धर्म री ॥१॥

“धर्मो छोड़ावे केहने
कर्म करो दुख पाय हो भविकजन ।
लाय लागी संसारमें,
बीचे पड़िया पाप बंधाय हो” भ० करो० ॥२॥

(उत्तर) इम भोलाने भरमायवा,
खोटा लगाया न्याय हो भ० ।
शानी कहे हिवे सांभलो,
इण भरमने देवां मिटाय हो भ० करो ॥३॥
भेंसयाने जातां देखने
दयावन्न दया लाय हो भ० ।

११

आठपिल्लो
बाल



चाथा ढाल ।

(कहे) “नाइो भरियो हो डेंडक माछला,
निण पर भेंस्यो आयो बलाय हो भविकजन ॥
तिणने हंकाल्या दुःख थो मरे,
नहीं हंकाल्या मरे तसकाय हो भविकजन ॥

करो परिक्षा सन धर्म री ॥१॥

“धर्मो छोड़ावे केहने

कर्म करो दुख पाय हो भविकजन ।

लाय लागी संसारमें,

रोचे पड़िया पाप संशय हो” भ० करो० ॥२॥

(उत्तर) इम भोलाने भरमायवा,

खोः। लगाया न्याय हो भ० ।

ज्ञानी कहे दिवे सांभलो,

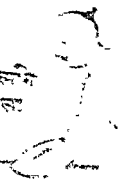
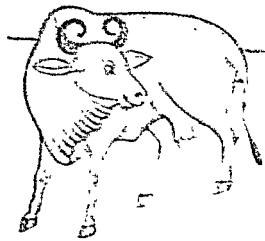
इण भरमने देवां मिटाय हो भ० करो ॥३॥

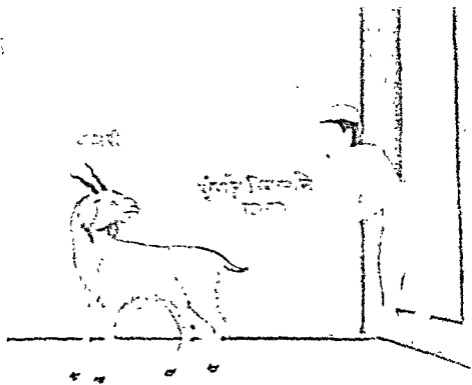
भेंस्योने जातां देखने

दयावन्त दया लाय हो भ० ।

ॐ

ब्राह्मपिल्लिगे
काल

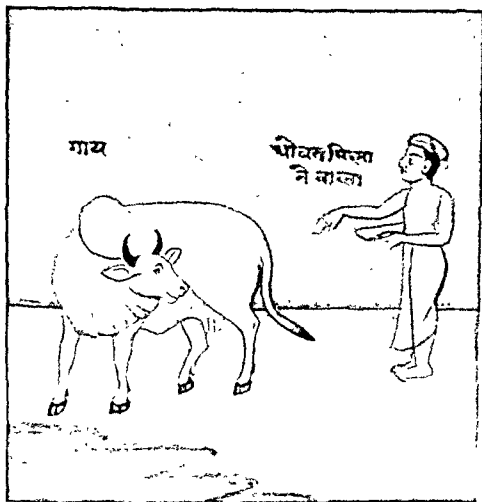




॥ ७ ॥

॥ जल जंतु रक्षा ॥

ढाल चौथी गाथा १५, १६ का भाव चित्र ।



घाडा में पाणा थोडका, जीव घणा तिन माय ह ॥ भ० ॥

भरिया डडक माडला पाणा पिवण भाईसाय हो ॥ न० । १० ॥

करुणावन्ते धोवन धानको, गायने दा दा पाय ह ॥ भ० ।

पाप शल्या दोनां तणा, इनमें धर्म हुआ के नाय ह ॥ न० ॥ १६ ॥



घोर हिंसक लम्पट मणा

पाप छोड़ावां हो मारो श्रद्धा रो रेश ॥शु०॥३॥

इसड़ा कुहेतु फेलवे,

जीवरक्षा में हो घनावं पाप ।

उत्तर इणरो सांभलो,

तेथी मिटे हो मिथ्या सन्नाप ॥शु०॥७॥

घोर अदत्त ले पारको,

ते घन ने हो दुःख-सुख नयो काय ।

धन रा घणी ने दुःख ऊपजे,

दृष्ट वियोगे हो आरत बहु होय ॥शु०॥८॥

तेथी अदत्त-पाप प्रभु भाखियो,

धनहर ने हो मुनि दे उपदेश ।

स्त्री हो पटी कृपां मांकी जाय ।

घारो पाप-धर्म नहिसाधुने,

रया मूवा हो तीनों भवत मांय ॥भ०॥८॥

धन रो धनी राजी हवो धन रघो,

जीव घचिया ते पिण हर्षित धाय ।

साधु स्तरण स्तरण नहीं तेहना,

नारीने हो पिण नहीं दुवोई आय ॥भ०॥९॥

(अनुबाम्पा ढाल - ५)

यत्तु नाना (ज्ञान) प्राप्तं हि,

ये इत्यादि तां पुनः प्राप्तं विद्यया ॥ ३७ ॥

यत्तु नाना विद्यया वि,

विद्यया नाना विद्या विद्यया विद्या ।

यत्तु नाना विद्या विद्या,

यत्तु नाना विद्या विद्या विद्या ॥ ३८ ॥

यत्तु नाना विद्या विद्या,

यत्तु नाना विद्या विद्या विद्या ।

यत्तु नाना विद्या विद्या,

यत्तु नाना विद्या विद्या विद्या ॥ ३९ ॥

यत्तु नाना विद्या विद्या,

यत्तु नाना विद्या विद्या विद्या ।

यत्तु नाना विद्या विद्या,

यत्तु नाना विद्या विद्या विद्या ॥ ४० ॥

यत्तु नाना विद्या विद्या,

यत्तु नाना विद्या विद्या विद्या ।

यत्तु नाना विद्या विद्या,

यत्तु नाना विद्या विद्या विद्या ॥ ४१ ॥

घकरा रे कर्ज चुके घणो,

कृण-मेटकहो पुत्तर सम जाग ।

साधु पिना मम तेह ने,

किम चरजे हो कदो चतुर सुजान ॥शु०॥१४॥

हिंसक ने चरजे सती,

करम कृण रो हो फयो पांथे तूं भार ।”

इम भोला ने भरमायवा,

रच दीनी हो कूडी-कूडोःडार ॥शु०॥१५॥

कहे गनी तुमे कुहेतु थो,

मिथ्यापख नी हो कीनी या थाप ।

यकरो दुःख थो नइरुहे .

दुःख पावे हो तेने अनि सन्ताप ॥शु०॥१६॥

शान्ति भाव उणरे नहीं,

तीव्र आरत हो ध्यावे रुद्र ध्यान ।

• जैसा कि ये कहते हैं—

जे घकरा रे जायपुं,

वांछे नदी दिगार ।

तिण ऊपर दृष्टान्त ने,

तैसी हल्का करम भारी हुवे,
 मन्द-रस ना हो तीव्र-रस पहिचान ॥शु०॥१७॥
 अल्पस्थिति महास्थिति करे,
 पाप भोगतां हो पांथे माठा कर्म ।
 एवी करकश-वेदनी वेदना,
 अरडावे हो ज्ञानी जाणे मर्म ॥शु०॥१८॥

सांभलजां सुग्यकार ॥ ६ ॥

माहुकार रे दोय सुत

एक कगूल अयघार ।

अण करडी जागा तणुं,

माथे करे अपार ॥ ७ ॥

दूजो सुत जग दीपलो,

यश संसार मभात ।

करडी जागा रो करज,

उतारे तिण वार ॥ ८ ॥

कहो बंहुने यरजे पिता

दोय पुत्र में देण ।

बर्जे कर्ज करे तमु,

के अम-मेटल पेण ॥ ९ ॥

॥ हाल्य ३२ मी ॥

(समता हम पिता ए देगी)

एवा कर्मयन्य ना काम में,
 कर्म-श्रूण हो लेवे मिथ्या नाम ।
 न्याय अन्याय तोले नहीं,
 परतख दीखे हो माठा परिणाम ॥१५॥
 सो पकरा कसाई एणता थका,
 मुनिवरजी हो तिहां दे उपदेश ।

कर्म माये सुन अधिक करतो ।

घार घार पिना घरजंतोरे, समझू नर दिग्ला ॥

करहो जागो रा माये कांय फोजे,

प्रत्यक्ष दुख पामोजे रे ॥ सम० ॥ १ ॥

अधिक माया रो कर्म उतारे,

जनक नाम नहि घारे रे ॥

पिना सनात साधु पिछापो,

दररो रजपूत घे सूत मापो रे ॥ सम० ॥ २ ॥

कर्म रूप अरण माये कुण करतो,

आगला कर्म कुण अपहरतो रे ॥ सम० ॥

कर्म रूप रजपूत माये करे छे,

पकरा नंविन-कर्म भोगवे छे रे ॥ ३ ॥

साधु रजपूत मे दजे मुहाय,

कर्म करज करे कांय रे ॥ सम० ॥

ते घान टालण बकरा तणी,

कसाई रा हो भेटण पाप कलेश ॥२॥

करकश वेदना उपज्यां,

बकरा घ्यावे हो महा आरत ध्यान ।

बलि रुद्र-ध्यान पिण उपजे,

“टाणाजंग” (में) हो जोवो घरध्यान ॥२॥

पूर्व कर्म दोनों भोग्ये,

नवा बांधे हो दोनों वैरागुपन्य ।

मुनि उपकारी वेहना,

उपदेशो हो टाले वेहना दण्ड ॥२॥

(कहे) “दिसरु पाप छुड़ाववा,

में मो देवाँ हो धर्म रा उपदेश ।

कर्म बंध्या घणा गोना सार्वी,

पर मन में दृश्य पागो रे ॥ ४ ॥

सरयर पणे निण ते समभायां,

निणरो निरणो बंध्यो मुनिराथो रे ॥ सम० ॥

बकरा जीवण नहीं रे उपदेश,

बड़ा भोचन बुद्धिगमन रेम रे ॥ ५ ॥

(भिक्षुद्वारा समाप्त)

क्षण मिथ्या-पत्र ने छोड़ दो ,

सन्-श्रद्धा रो हो मन जाणो ख्याल ॥३२॥

निज्जरा भर्म मिटायवा,

एक हेतू हो सुनो चतुर सुजाण ।

मास-त्रमण रं पारणे,

गोबरी आया हो मुनिजो गुणखाण ॥३३॥

कोई मूरख मन में चिन्तवे,

आहार बेराया हो निज्जरा मन्द होय ।

नहिं बेरायां निज्जरा घणो,

नप चरसी हो मुनिने गुण जोय ॥शु०॥३४॥

जिण सुपात्रदान न ओलख्यो,

ते मूढ़-मनि हो एवो करं विचार ।

मुनि जांचे छे आहार ने,

देवगवाला ने हो हुवे लाभ अपारा ॥शु०॥३५॥

कदा आहार मुनि ने मिले नहीं,

समभावे हो निज्जरा बहु होय ।

त्याने पिण आहार आपनां,

दाता रे हो धर्म रो फल जोय ॥शु०॥३६॥

एवो कुहेतू बेलवो,

भोला आगे हो करे मत री थाप ॥शु०॥१०॥

(उत्तर) हिवे ज्ञानी कहे भबि सांभलो,

बचियो-भरिया री हो सरखी नहीं बात ।

बकरा री रक्षा कारणे,

उपदेशे हो मुनिजो साक्षात् ॥शुद्ध०॥११॥

नारी मारण (मुनि) कामो नहीं,

मारण में हो नहीं पर-उपकार ।

जात्मघात करे (कोई) पापिणी,

महा मोहवश हो मरे ते नार ॥शु०॥१२॥

त्याग हेते स्त्री मरे नहीं,

मोह कारण हो वा मरे मत-हीण ।

तिणरी पिण घात छुड़ायवा,

उपदेशे हो मुनि धर्म-प्रवीण ॥शुद्ध०॥१३॥

सुण उपदेश (कदा) यच गई,

तेथी टलिया हो महा-मोहनो-कर्म ।

आत्महन्या टल गई,

गुण निपज्यो हो यो धर्म री मर्म ॥शु०॥१४॥

बकरो नारी पनिया धका,

गुण निपजे हो दले पाप बिकार ।

स्वधाने गुण नहिं नीपजे,

सुधमन थी हो करो जरा विचार ॥१२५॥

मरणो बचायणो एक है,

एनां जाणो हो बिकलां रा वेण ।

जारे वान नहीं घर्म-याण रो,

जाग कृटा हो हिणा म नेण ॥शुद्ध०॥१२६॥

मृत्ति उपकारो बेहना,

बेह जग ना हो मेह्या माटा कर्म ।

जां श्रद्धा वामे मे बेह,

तो वामे हो संशानो-वर्म ॥शुद्ध०॥१२७॥

आत्म-मट दले बेहना,

श्रद्धा वामे हो वर्म-शानो होय ।

इम विष्णु-नाम मृत्ति बेहना,

श्रद्धा हो मृत्ति बेहना जोय ॥शुद्ध०॥१२८॥

कदि कर्म-उदय बेह जगा,

मंदर श्रद्धा हो वामे नहिं होय ।

(तिम) हिंसा छूट्या बच्या जीवड़ा,
 उपकारो हो मुनि रक्षक जोयें ॥शुद्ध०॥६८॥
 जीव मारण में हिंसा कही,
 नहीं मारे हो दया रा परिणाम ।
 मरता जीव बचावधा
 मनसा यावा हो दया रो काम ॥शुद्ध०॥६९॥
 * वेडक इणमें इम कहे,
 “जोवाँ काजे हो नहिं दाँ उपदेश ।
 एक हिंसक समझायने,
 नहिं भेटाँ हो घणा जीवां रा क्लेश” ॥७०॥

* जैना कि वे रहते हैं:—

केडक अशांती इमि कहे,
 छः काया काजे हो देतां धर्म उपदेश ।
 एकण जीव ने समझायिनां,
 भिट जावे हो घणा जयां रा क्लेश ॥
 भव्य जीवा तुयें जिन धर्म अलखो ॥१६॥
 छः काय धरें शान्त हुवे,
 एवोभास हा अन-तार्यो धर्म ।
 न्यां भेद न पायो जिन धर्म रो.
 ते तो भूल्या हा उदय आया अशुभ कर्म ॥१७॥
 (अनुकम्पा डाल--५)

एवा अनघट हो घट्टावे टोल ।

मिथ्या-उदय जे जीवरे,

तेना मुख थो हो एवा निकले पोल ॥७५॥

व्यवहार शान्ति परजीव ने,

निश्चे थो हो निज री ते होय ।

व्यवहार शान्ति उधापना,

निश्चे पिग हो खोय वेडा सोय ॥शु०॥७६॥

आगे जिन अनन्ता हवा,

छः काया रा हो शान्ति करतार ।

दुःख मेटण उपदेश थो,

जगवच्छल हो जग ना सुखकार ॥शु०॥७७॥

जगनाथ, जगपन्यु कथा,

नन्दी-सूत्रे हो गाथा प्रथम मांय ।

सय जीव राखण उपदेश थो,

सुख थापे हो पन्यु पद पाय ॥शु०॥७८॥

कहता २ हो नही आवे त्यांग पार ।

ने आप तरया और तारिया;

छःकाया रे हो शान्ति न हुं लिगार ॥२१॥

(भनुकम्या शाल — ५)

ज्ञानिनाथ प्रभु गोलवाँ,

ज्ञानिनाथना हो सब लोक रे माँव ।

बलराघ्येन से बैसलो,

गणपती हो गुण जारा माग ॥३७॥३७॥

कही-कही ने फिना कहँ,

छः काया रे हो ज्ञानिनाथना हा नाम ।

जो ज्ञानि न होनी छः काय रे,

ज्ञानिनाथना हो किम होता इगाम ॥३८॥

मिथ्या हेतु सज्ज्या,

बलि भाणुँ ही सुख ही माग ।

सन्त-सन्त ने ओरलो,

सज्ज्या हा ही मिथ्या ग काय ॥३९॥३९॥

बलराघ्येन श्रुत वैशरी,

जगन्नाथ हा केसा मुखाय ।

मिथ्या हा हा माग से,

बलराघ्येन हो दीनी मुखाय ॥४०॥४०॥

बल श्रुत हा मुग दर्शनी,

बो बोलो ही मुनिने मुखाय ।

परदेशी अति पापियो,

पाप करने हो अति दृष्टि धाय ॥शुं०॥८३॥

अधर्मो यो राजवो,

अधर्म नी हो करे निशदिन धाय ।

रुविर नीर एक लमगिणे,

गाढ़-गाढ़ा हो स्वामी कर रयो पाप ॥८४॥

यो तो नर पशु पंखो ने,

(भिक्षु आदि को) वृत्ति आदी हो छेदी हर्षाय ।

विनय-भाव निगमं नही,

तेयो गुहजन (मान पिता आदि)

हो आदर नहिं पाय ॥ शुद्ध० ॥८५॥

देश दुःखा इण राय थो,

करड़ा लेवे हो हार्सिक दुःख दाय ।

तेने धर्म सुनाविश,

यहु गुणकर हो होना मुनिराय ॥शुं०॥८६॥

गुण होसी परदेशी राय ने,

पशु-पंखी हो नर ने गुण धाय ।

श्रमण महाण भीखारी ने,

बहु गुणपर हो होमी सुलक्षण ॥३७॥८७॥

देश ने बहु गुण उपजमी,

होजामी हो काड़ा हर्मिण्ड तूर ।

राज १, जीव २, मिश्र ३, देश ४ ने,

गुण हेमे हो भर्म भाणो मन् ॥३७॥८८॥

जीव भाग्य परिणाम भी,

राजा ने हो माटा लामे पाप ।

(ने) उपदेश भी टल जायभी,

गुण नामा हो परदेशा भाव ॥३७॥८९॥

राज उपदेश ना काप भी,

मनुष्यादिक ने उपजे गणा क्रु ज ।

नेथी पापकर्म र्थी करे,

राजा उपर हो गणा उपज ह न ॥३७॥

यी हा काप क्रु ज मिट जायभी,

राजा उपर हो मिट नामा ह न ।

(नेथी) जेथी ने बहुगुण हायमी,

मूर्तिपूजो हो पर उपदेश ॥३७॥ ९१॥

रूप मूर्तिदेह काही करे,

राजा पारदेशा गिनप्रधान और केंगी धमण ।

विष इन्हे के लिए है वन के लिए नहीं ।

दूध बाँकरी गागा ८०, ९० का नाम विष ।

श्रीगणेशाय नमः
श्रीगणेशाय नमः
श्रीगणेशाय नमः

गुण

राज

मनुष्यादि

नेवी वा

राजा उग्र हा

वाँ हा वाग ३

राजा उग्र हा वि

(नेवी) मोदी नं ६

मुनिद्वारा ही वाग

दूध मुनिद्वारा वाँ वाँ

राजा परदेशी, चित्तप्रधान और केशी श्रमण ।

चित्र देखने के लिए ही घटने के लिए नहीं ।

हाल पाचर्यो गाथा ८६, ६० का माघ चित्र ।

“तं जज्ञं देवाणुष्पिषा पदेसिस्सरणो धम्ममारकसेज्जा एहु-
गुणत्तरं सत्त्वं होज्जा पदेसिस्सरणो तेसिणं षड्ढणय दुपय
चउणय मिग एसु एक्खि सरोसियाणं ।”

“जीव मारण परिणामयी,

राजारं हां माटा लामं पाप ॥

ने) उपदेश्या टल जावसी,

गुणयाम्ना हा परदेशी भाप ॥शु०॥८६॥

राय उपद्रव ना काय थी,

मनुष्यादिक ने उपजे घणा ॥श०॥

तेयो पाप कामे मन्वीकरे,

राजा ऊपरहां घनो उपजे हूँ ॥ शु० ॥६०॥

नेथी पाये हो ब्रेला पाप-रुम ।

वृत्ति-त्रेद राय छोड़सी,

उपदेशो हो स्वामी निर्मल्यम ॥शु०॥०२॥

वृत्ति-नृटा दुखिया धका,

श्रमणादि हो करे हाय-विलाप ।

निशादिन कोपे राय पे,

खोटा लेश्या हो खोटा दौंघे पाप ॥०३॥

ते सगला ही शान्ती पावली.

मिद जासी हो खोटा परिणाम ।

तेथी महागुण श्रमण-भहाण रे,

भीखारी रे हो होमी गुण रो घाम ॥०४॥

देश दुःखी राजा कियो.

करड़ा-हाँसिल हो वांघे करड़ा पाप ।

ते छोड़ देशो उपदेश धी.

तेथी टलसी हो नेना पाप-सन्ताप ॥शु०॥०५॥

देशवासी राजा धकी.

नित्य पावे हो गाड़ा सन्ताप ।

राजा पर कोपे घणा,

तेषां धन्ये हो घणा गात्रा पाप ॥१५॥

देश फलक मिट जायसो,
दण्डजामी हो मेला पाप विचार ।

देश ने बहुगण निपजसो,
तुमे को हो स्वामी धर्म उच्चार ॥१६॥

चिन विनतो करो शुभ-भाव री,
शुभ अद्रा री हो तुमे करो पिछान ।

(गो) श्रवणरी-श्रावण भोटका,
मर्यादत घर हो गुण रक्षा री राग ॥१७॥

जो जीव, शिष्यारी, देश री,
कम्पा में हो नहि अद्रता धर्म ।

(नां) अचम अर्ज दिग किम वरी,
जिन बभनां री हो ते नां जगतां मर्म ॥१८॥

जीव वसावग कावणे,
अदरां हा चिन अद्रता पाप ।

बीनालो गुरु आगळे,

दिवनी कम्पा हो इगदिव ते धार ॥१९॥
स्वामी ! शिष्या उांदावो रावरी,

केशी श्रमण, चित्त प्रधान, परदेशो-राजा
तथादेश ।

चित्र देखने के लिए हे चंदने के लिए नहीं ।

हाल पांचवीं गाथा ६५, ६६, ६७ का भाव चित्र ।

“तं जह्णं देवाण्युप्पिया ! पदेसिस्स यद्दुग्गुणत्तरं होत्था-सयस्स
विषणं जणयस्स ।”

—————

“देशदुखी राजा कियो,

करड़ा हांसिल हो यदि करड़ा पाप ॥

ते छोड़ देशी उपदेशी,

तेधी टलसी हो तेना पाप-संताप ॥शु०॥६५॥

“देशपासी राजा यकी,

नित्य पाये हो गाढा संताप ॥

राजा पर कोपे घणा,

तेधी बंधे हो घणामाढा पाप ॥शु०॥६६॥

“देशकलह मिट जायसो,

टल जासी हो मेला पाप विचार ॥

देशने घट्टु गुण निपजसी,

तुमे करो हो स्वामी धर्म उचार ॥शु०॥६७॥



चित्तजो री हो श्रद्धा थो एक ।
 (तियो) विनती मानी भाव थो,
 चार यातां रो हो यतागे लेख ॥शु०॥११०॥
 छोड़ो रं छोड़ो निध्यात ने,
 जोवरदा रो हो तुमे श्रद्धो धर्म ।
 त्यागो कथन कुगुन तणो,
 खोटो घाल्यो हो जनुकन्या में भर्म ॥१११॥
 कोई पतिव्रता सती नणो,
 एक पापी हो खण्डे शोल विशेष ।
 देहत्याग मांडयो सती,
 तीटां मुनिजन हो दीनो उपदेश ॥११२॥
 प्रबोध पापी पामिशो,
 सती नार ना हो रक्या शोल ने प्राण ।
 मुनि उपकारी बेहूना,
 तुमे समझो हो समझो नि सुजाण ॥११३॥
 एक मौनव्रती मुनिराज री,
 कोई पापी हो करतो थो धान ।
 (निगने) उपदेश देई समझावियां

रक्षा कौची हो मुनि नो गिहयात दे ॥१११॥
 जो बकरो बच्या पाप शूद्रभी,
 तिगरे लेलें हो मुनि यमिभा गे पाप ।
 जो मुनि बच्या परणा कही,
 नां पररो बयिगा हो दया-वर्म हे साफ ॥११॥
 लोटा कुहेनु लणहणी,
 दाद जांको हो राजदसेर मांय ।
 मणि मन शूद्र अदना,
 अडा नां हो विश्वमय तुम पाप ॥११॥

हीन पत्र - दुसरे - पृ. १००



दोहा

माधु जीव मारं नहीं, पर नै न कहे मार ।
 भलो न जाणे मारिया, त्रिराण शुद्ध विचार ॥१॥
 हणे, ह्यावे, भल मणे, परजीवां न प्राण ।
 मोन क्षण हिंसा कर्तो, श्री जिन वचन प्रमाण ॥२॥
 पोले, पोलावे, भल कहे, नापय कृदा वेग ।
 नीनों करणे झूट है, खोलो अन्तर नेण ॥३॥
 जिम सत बोले माधुजी, पर नै कहे तू पोल ।
 भल जाणे मत पोशिणां, तोनों करण अनोल ॥४॥
 तिम साधु पचावे जीव नै, पर नै कहे वचाय ।
 पनिया अनुमोदन करे, त्रिराण शुद्ध कदाय ॥५॥
 (कौ) 'सावज-मन्य न पोदणो, तिम न यवागो जीव
 अनुकम्पा सावज हुवे.' या कुगुणं ही नीव ॥६॥
 (उत्तर) मादक-निस्वय दूधमें सत्य रा भाख्या भेद
 पिण अनुकम्प रा नहीं, तज दो खादो खेद ॥७॥
 जिण पोले परजीव नै, दुख उपज सुख नांय ।
 नै सत नै सावज कर्ता, सुगदायंज रे मांय ॥८॥
 पर पीडाकारी नहीं, हितकारी सुखदाय ।

ते सत निरवद्य जाणउयो, जिन सासन रे मांय ॥९॥

अनुकम्पा पर-जीव ना, प्राण यचावण हार ।

दुःख तिण थी उपजे नहीं, निरवद्य निइचे धारा ॥१०॥

भय भेटयो परजीव नो, दान अभय प्रभु गाय ।

तिण में दाप वनावियो, जैनी नाम धराय ॥११॥

अभयदान नहीं ओलख्यो, दोनी दया उठाय ।

भोला ने भरमायवा, कृडा चोज लगाय ॥१२॥

(कहे) "जीववचावे मुनि नहीं, पर ने न कहे यचाव

भलो न जाणे यचाविया" इम खोटा खेले दावा ॥१३॥

ढाल-छठी

(तर्ज—चतुर नर छोड़ो कुगुरु नो मंग)

इण सायां रा भेख में जो,

घोले एहवी वाय

“छकाय रक्षा ना करांजी,

जीव वचावां न।६ ॥

चतुर नर समझो ज्ञान विचार॥१॥

एहवी करे परूपणा जो,

पिण घोलें बन्ध न होय ।

बदल जाय पृच्छ्यां थका जो.

ने भोला ने खयर न काय ॥चतुर०॥२॥

धारं पाणो रे पानरे जो.

मात्वां पड़िया जाय ।

दुःख पावे जनि नइकड़े जा.

जूदा हांवे जीव काय ॥चतुर०॥३॥

साधु देखे तिण खवमरे जो.

(जो) पाप कहो भगवान ने जी,

(तो) पोते कां छोड़ो रीति ?

उन्दिर माखा यचाविया (जो)

धारी कूग माने परतोत ॥चतुर०॥१०॥

गोसालाने यचायवा में,

पाप कहो साक्षात ।

(सौ) माखां भरता देखने जो,

क्यों काड़ो निज हाथ ॥चतुर०॥११॥

इम कर्णां जाय न ऊपजे जो,

जय खोटो काड़े घाय ।

(कहे) “उपधि हम साधु तयो जो,

जानें जीव कोई मर जाय ॥चतुर०॥१२॥

तो हिंसा लागे साध ने जी,

(ने) टालण यचावां जीव ।

दृजा नाय यचावगा जी,

या मारी श्रद्धा रो नीव ॥चतुर०॥१३॥

(उत्तर) (धारी) नैसराय रो मृषि में जी,

(धारा) पाटा रं निरुट में लाय ।



उन्दर चिड़िया षचावतां जी,

शंके नाहीं लिगार ।

श्रावक ने घेठो किया में,

पाप रो करे पुकार ॥ चतुर० ॥ १९ ॥ :

इतरो समज पड़े नहीं,

न्यामे समकित पावे केम

इकिया मोह मिथ्यान में जी,

पोले मतवाला जेम ॥ चतुर० ॥ २० ॥

(कहे) 'सायां ने उन्दर काटणों जी,

पानरादिक धो धार ।

पाटा पर श्रावक मरे जी,

(नां) घेठो न करां लिगार" ॥ चतुर० ॥ २१ ॥

(उत्तर) श्रावक घेठो ना करोंजी,

उँदर काटो जाय ।

जा ग्योटी भ्रष्टा ताहरो जी,

मिले न धारो न्याय ॥ चतुर० ॥ २२ ॥

(या) परतल पात मिले नहीं जी,

नावडा छांही जेम ।

न्यायमार्ग ज्यां ओलखयो जी,

ते विकृतां रो माने केम ॥चतुर०॥२३॥

(कटे) "पेट डुरो सो धायरां जी,

जुदा होयें जीव काय ।

(धें) हाथ फेरो पेट उपरं जी,

सो आवक वच जाय ॥चतुर० ॥२४॥

(जो) जीव बचाया में धर्म छे सो,

साधु ने फेरणो हात ।

(जो) हाथ साधु फेरे नहीं,

तो मिथ्या धारी पात" ॥चतुर०॥२५॥

(उत्तर) साधु कहे हिये सांभलो जा,

इण कुयुक्ति रो न्याय ।

(जो) हाथ फेरधा निज जीव बचे,

(तो) निज रो फेर वच जाय ॥चतुर०॥२६॥

हाथ फेरन रो साधु ने जी,

आवक केसी केम ।

हठबादी समझे नहीं जी,

आवक जाणे (धर्म रो) नेम ॥चतुर०॥२७॥

(कहे) "लब्धि जानोसही साधुरेजी,

करत्यां दुःख मिट जाय" ।

(उत्तर) तो (वह) चरण मुनि रा फरसती जी,

तत्तज्ञ चोखो थाय ॥ चतुर० ॥ २८ ॥

चरण साधु रा फरसणा जी,

श्रावक रो जावार ।

हाथ फेरण रो कहे नहीं जी,

यें झूठ करो उच्चार ॥ चतुर० ॥ २९ ॥

लब्धि मुनीरी देह में जी,

जो फरसे मुनि काय ।

(तो) रोग मिटे साना होवे जो,

मुनि ने दोष न थाय ॥ चतुर० ॥ ३० ॥

(जो) चरण फरस दुःखदो मिटेजी,

या जिन जाना न मांय ।

निहीं हाथ फेरण कारण नहीं जी,

थारा मन ने लो समझाय ॥

(यें झूठी उठाई वाय) ॥ चतुर० ॥ ३१ ॥

शुश्रूष्यां बहु क्लेशो जी,

भोलां दो भरमाय ।

ज्ञानी न्याय बनाय दे जय,
भरम तुरत मिट जाय ॥ चतुर० ॥ ३२ ॥

(कहे) “उंदिर नांय छोड़ावणो जी,
मिन्ना मारण घाय”

एवो कर-कर थापना जी,
भोलां दिया फंसाय ॥ चतुर० ॥ ३३ ॥

(उत्तर) आवश्यक-मृत्र देखलो जी
ध्यान आगारा रं मांय ।

उन्दरादिक ने मारवा जी,
विह्नी झपटो आय ॥ चतुर० ॥ ३४ ॥

आगे सरक यचायनां जी,
काउसग भागे नाय ।

(बलि) टीका ने निर्युक्ति में जी,
रगत दिणो बनाव ॥ चतुर० ॥ ३५ ॥

हजारों वर्षा नणी जी,
नर्युक्ति निधार ।

बवदा सी यपां नणी जी,

(घो) टीका में विस्तार ॥ चतुर० ॥ ३६ ॥

आचारजजागे हुआ जी,

ज्ञान गुणां रा धार ।

उंदरादिक बचायवा में,

पाप न कथो लिगार ॥ चतुर० ॥ ३७ ॥

पाट सताविस तुमे कहो जी,

प्रभु जाज्ञा रा धार ।

तेनो कथी निर्युक्ति में जी,

यो भाख्यो निरघार ॥ चतुर० ॥ ३८ ॥

ध्यान में जीव बचायनाँ जी,

काउसग भंग न होय ।

आवश्यक निर्युक्ति तणो जी,

निरणो लेजो जाय ॥ चतुर० ॥ ३९ ॥

अठारं से संवत पूरवे जी,

जीव बचावन माँय ।

कोई आचारज नहीं कथो जी,

पाप करम बन्वाय ॥ चतुर० ॥ ४० ॥

अपुठो इम भाषियो भिनो,

करे सुवा री घात ।

ध्यान सोल बचावतौ जी,

दोष नहीं तिलमात ॥ चतुर० ॥ ४१ ॥

(कहे) "मूमादिक ने बचायलो जी,

मिनकी ने छुछुकाय ।

आयक मरे मुख आगले जी,

निगने बचावों के नाय" ॥ तुर० ॥ ४२ ॥

(उत्तर) मरतो जाण बचाविया जी,

दोष मुनि ने न कोय ।

निशिय अर्थ में देणलो जी,

भरम दिया रो खोय ॥ चतुर० ॥ ४३ ॥

आयक बचाय धर्म छे जी,

सायु भी लेले बचाय ।

अबमार डाम-कूटाम नो जी

कल्प रो ध्यान लगाय ॥ चतुर० ॥ ४४ ॥

धर्म देजाना (दना) धर्म में जी,

विग देवे कल्पने टाय ।

(त्रिय) जाय बचावगों धर्म में विग,

करे कल्प थो काम ॥ चतुर० ॥४५॥

चिड़ियो मुजो धारा स्थान में जी,
धारे अटक्यो सज्जाय रो काम ।

परठो के परठो नहीं जी,

तय उत्तर देवे ताम ॥ चतुर० ॥ ४६ ॥

“चिड़ियाँ ने ता परठदाँ जी,
जाणी धर्म रो साय ।”

(तो) कुत्तो मरयो धारा धान में जी,

तेने परठो के नाय ? ॥ चतुर० ॥ ४७ ॥

“माधू योजाँ म्हें जैन रा जी,
कृत्ता घोसाँ केम ?”

(तो) कुरा ने िड़िया तणो धारे,

रयो न सरखो नेम ॥ चतुर० ४८॥

(तिम) जीव बचावा में जाणज्या जी,

ज्ञान से न्याय विचार ।

अवसर अण-अवसर तणो जी,

साधु तणो आचार ॥ चतुर० ॥ ४९ ॥

(रुहे) “गाड़ा हेटे मरे डावड़ोजी,

तुमे साधू लैयो उठाय ।

आवक मरतो जाण ने जी,

निण ने उठावो के नाय” ॥

(उत्तर) भ्हे तो जीव यचायवा में,

धर्म रो अद्वौँ काम ।

आवक ने लइका तणो जी,

म्हारं न भेद रो ठाम ॥ चतुर० ॥ ५१ ॥

(कहे) “लट, गजायां, कानरा जी,

दांडा धो चींधी जाय ।

त्यां ने यचाया तणो मुनि,

क्यो नहिं करे उपाय ॥ चतुर० ॥ ५२ ॥

जो लइकाने यचावसो जी,

मां लडादि लेसो यचाय

(जो) लट गजाई रक्षा न करे जी,

तो लइको यचावे कायँ” ॥ चतुर० ॥ ५३ ॥

(उत्तर) दोनों यचाया धर्म छे जी,

धेँ झूठा रच्या तोकान ।

मिथ्या पंथ चलायवा जी,

भृष्ट गणा रं भान ॥ चतुर० ॥ ५४ ॥

(पत्ति) लक्ष्मी, लट, गजाय, नो जी,

सरयो नरीं छे न्याय ।

लक्ष्मी सन्तो पंचेन्द्रो ते,

लट सम कहां किम धायः॥ चतुर० ॥ ५५ ॥

शक्य होवे तो पनायले जी,

कीष्ट मर्यादा रा प्राण ।

अशक्य पनाई ना मरे,

जांरी मूर्य करे कोई नाण ॥चतुर० ॥ ५६ ॥

द्रव्यश्रेष्ठ ना अवसरं जी,

उपदेश दे मुनिराय ।

पिन अवसर तो ना दिये जी,

(तिथी) उपदेश अधर्म में नांय ॥चतुर० ॥ ५७ ॥

(तिम) अवसर हांवे साध रो जी,

जीवा ने लेवे यचाय ।

पिन अवसर रक्षा न हुद तो,

रक्षामें पाप न धाय ॥चतुर० ॥ ५८ ॥

उपदेश १, रक्षान्, धर्म में जी,

दोषों में शुभ परिणाम ।

पिण अवसर होवे जद सदे जी,

श्रद्धे आछो काम ॥ चतुर० ॥ ५९ ॥

उपदेश बनावे धर्म में जी,

जीव बचाया पाव ।

[पा] छोटी श्रद्धा तेहनी जी,

ज्ञानी जाणे साक ॥ चतुर० ॥ ६० ॥

लड़का लड़ सरिखा कहे जी,

(ते) मुख, मूढ़ गवाँर ।

जैनी नाम धरायने जी,

श्रष्ट किये नरनार ॥ चतुर० ॥ ६१ ॥

कीड़ा, मकोड़ा, मनुज नी जी,

सरखो बनावे पात ।

(ते) भेष लई भारी हुआ जी,

धर्म री कर रया घान ॥ चतुर० ॥ ६२ ॥

चउनाणो शुध संपमी जी,

वीर जगत गुठ राय ।

गोसालाने पचाविषो जी,

लडुकम्पा दिव लाय ॥ चतुर० ॥ ३३ ॥

(जी) जीव बचावगो पार में जी

गोलालो बचायो रेन ।

उरार न लायो एहो जी,

नय झुठ सोल्या नज नेन ॥ चतुर० ॥ ३४ ॥

(करो) "गोलाला ने बचावियो जी,

चूक गया महावीर ।

पार लागो श्री वीर ने,

न्यारी अद्दा एही गंभीर" ॥ चतुर० ॥ ३५ ॥

(यति करो) "सावां ने लमि न कोहणी जी,

मूत्र भगोती रे नांय ।

लघी कोह बचावियो जी,

नेधी पार कर्म बन्दाय" ॥ चतुर० ॥ ३६ ॥

(उत्तर) उपदेशो जाव बचावले जा,

लमि कोहे नाय ।

ने पिन पार एहन ने,

पारी अद्दा रे नांय ॥ चतुर० ॥ ३७ ॥

(नेधी) मूठा बोज लगाविया जी,

लक्ष्मि केरे नाम ।

अनुकम्पा उठावथा जी,

यो मिथ्या-मत रो काम ॥ चतुर० ॥ ६८

[इम] ममुचाय लक्ष्मि रा नाम ले जी,

भोलैं ने दे भरमाय ।

पिण मांची कोई मत जाणायो जी,

भेद सुणां चित लाय ॥ चतुर० ॥ ६९ ॥

जाण्य लेट्या लक्ष्मि नो जी,

दाय न म्तर मांय ।

मुण्यदाई दृण ना हांये जी,

(पशो) शाय-हिंसः नहिं थाय ॥ चतुर० ॥ ७०

अंग उपाहर ग्रन्थ में इण,

लक्ष्मि रो दाय न काय ।

तां पिण थाय वनाइयो जी,

यो काट कुमुद रा माय ॥ चतुर० ॥ ७१ ॥

दाय हांये जे लक्ष्मि श्री मे,

मष्ट वनाया नाम ।

इगरो नाम न वासियो ये,

तजो कपट रो काम ॥ चतुर० ॥ ७२ ॥

[कहे] “उष्ण न शीतल एक छेजी,

तेजू लव्हि रा भेद”

मद छकिया हम ऊचरे जी,

[ते] सुणनाँ उपजे खेद ॥ चतुर० ॥ ७३ ॥

(उत्तर) शीतल थी शान्ति होवे जी,

जीव न विणत्ते कोय ।

उष्ण थी जीव मरे घणा जी,

एक किसा विव होय ॥ चतुर० ॥ ७४ ॥

(कहे) “अग्नि पाणी भेला होवे जी,

जीव घणा मर जाय ।

[तिम] तेजू शीतल लव्हि मिल्याँ जी,

घात जीवाँ रो धाय” ॥ चतुर० ॥ ७५ ॥

[उत्तर] तेजू लेश्या पदगल भणी जी ।

अचित कल्या जिनराय ।

मूत्र भगोती में देखलो थें,

खोट्टा लगावो न्याय ॥ चतुर० ॥ ७६ ॥

हिंसादी कूरुर्भ थो जी,

खोटी-लेश्या थाप ।

जीव रक्षा रा भावमें जो,

भली लेश्या सुखदाय ॥चतुर०॥७७॥

मीठी-लेश्यामें ना कख्यो जो,

जीव रक्षा रो काम ।

उत्तराध्येन चांतिस में जी,

लक्षण द्वार रे ठाम ॥चतुर०॥७८॥

सदा शुद्ध-लेश्या वीर में जी,

पाप कहो किम होय ।

आचार'गे देखलो जो,

प्रभु पाप न कोनो कोय ॥चतुर०॥७९॥

[कहे] "राग हुंतो तब वीर में जी,

लियो गोसाल यचाय ।

'छटमस्थपणे चूक्रिया' म्हें,"

पाप केवां इण न्याय ' ॥चतुर०॥८०॥

[उत्तर] छटमस्थ राग रो नाम लेने,

पड़िया पाप रे कूप

अरिहन्न आसातना करी जो,

गोसालाने बचावियो जी,

पाप जाणना इयाम ।

तो सर्व सार्धा ने यज्ञता जी,

इसरो न करजो काम ॥ चतुरं ॥ ८३ ॥

केवल ज्ञान में प्रभु क्यो जी,

अनुकम्पा रो धर्म ।

गोमालाने बचावियो प्रभु,

प्रकट कथ्यो यो मर्म ॥ चतुरं ॥ ८४ ॥

दोष न लेश प्रभु क्योजी,

गोमाल बचाया माँय ।

धोतराग गोपे नहीं जी,

प्रकट ह्ये कुम्भाय ॥ चतुरं ॥ ८५ ॥

गोत्रमने प्रभुजी क्योजी,

आनन्द लेशो श्रमाय ।

प्राणिन ले निर्मल हृयो ज्युं,

दोष धोरा मिट जाय ॥ चतुरं ॥ ८६ ॥

गोत्रम दोष मिटावया जी,

प्रकट कथ्यो प्रभु भाय ।

खोटा न्याय लगावना जो,

कह्या कडा लग जाय ॥ चतुर० ॥ ९९ ॥

(उत्तर) आयुष जायो तेहना जो,

इच्छयो ओ जिनराज ।

निश्चय टाल्यो न टाल्यो (जो),

ज्यां सारथा जानम काज ॥ चतुर० ॥ १०० ॥

(कहे) "गोतमादिक गणधर हुं नाजो,

छद्मत्य लब्धि ना धार ।

ज्याये क्यो न यचाविया जी,

शानल लेख्यां निहार" ॥ चतुर० ॥ १०१ ॥

(उत्तर) जिन नहिं जिन समा कह्या जो,

गोतमादि गुणधार ।

जागे आयु सर्व नो जा

बलि होनहार निधार ॥ चतुर० ॥ १०२ ॥

धर्मघोष मुनि जागियो जी,

धमं रुवां चिरन्त ।

सर्वार्थ-सिद्ध में देखियो वे,

पूवधर धा मदन ॥ चतुर० ॥ १०३ ॥

श्रावक शरणं

गोसाला ५१२२

साधु-श्रावक ३

सक्यो गोसं

मिथ्यातो मिथ्य

हुआ गोशाल

मिथ्यात पधियो ५१२२

स्योटी धारी

श्रावक गोसाला ५१२२

प्रस री नहि करे ५१२२

कन्द मूल पिपा ना म ५१२२

या मूय-भगोती में

तप तो मराहो

छोटी करया थाप

अनुकम्पा रा देष थी

जाय पचाया

बलि कष्ट करा

“दो साधु ५१२२

आयुष मुनि रो जाणता जो, ॥ १०३ ॥

गोनमादि गुण धारता जो, ॥ १०३ ॥

पिहार मुन्यां ने करावता जो, ॥ १०३ ॥

(धारेपिण) जामें दोष न केक लिगार ॥ १०४ ॥

(मुनि) निदने देख्यो ज्ञान में जो, ॥ १०४ ॥

ते किम टारयो जाय । ॥ १०४ ॥

ते जाणो ज्ञानी-मुनी जो, ॥ १०४ ॥

न मक्या त्यां ने बचाय ॥ चतुर० ॥ १०५ ॥

मो कोमां वेर न ऊपजे जो,

अरिहंत अतिशय विशेष ।

समयसरण में ऊपनो ते,

हांगहार रो रंय ॥ चतुर० ॥ १०६ ॥

निदचय होण रा नाम से जो,

गोशाल्य यथाया में पाय ,

उलटा न्याय लगायने जो,

वे क रया खोटीयाय ॥ चतुर० ॥ १०७ ॥

सब हेतु सुण समझमां जो,

जामें शूढ पिघेक ।

पक्षपात नज पाननी जी,

निरमल सनकित एक ॥ चतुर० ॥ १०८ ॥

निध्यान्तरङ्ग ने करी जी,

जोड़ दुगत कर न्याय ।

शुद्ध भावे ब्रह्म था यका जी,

सानन्द संगल थाय ॥ चतुर० ॥ १०९ ॥

संवन जगतीसे नने जी,

छोपाँती रे सल ।

जायाद शुक्ला पंचमी जी,

बने संगल भाय ॥ चतुर० ॥ ११० ॥

हठोद्धान मन्त्रः ॥



पक्षपात मज पामसी जी,

निरमल समकित एक ॥ चतुर० ॥ १०८ ॥

मिथ्या-खण्डन ने फरी जी,

जांड़ जुगत धर न्याय ।

शुद्ध भावे श्रद्धया धका जी,

मानन्द मंगल धाय ॥ चतुर० ॥ १०९ ॥

संवत उगणोसे मणे जी,

छीयाँसी रे साल ।

आपाढ़ शुक्ला पंचमी जी,

घरते मंगल माल ॥ चतुर ॥ ११० ॥

छठी द्वार सम्पूर्ण



सर्व पापों का नाश करने वाला

सर्व पापों का नाश करने वाला

सर्व पापों का नाश करने वाला

दोहा

सफल नियल ने मारता, देख्या दोन दयाल ।
छिन कर धर्म परूपियो, जीव दया प्रतिपाल ॥१॥
निरयल जीव बचायवा, सफल ने समझाय ।
पामें पाप यतावियो, केइक कुमति बलाय ॥२॥
मांसादिक छुड़ाय दे, अचिन यस्तु रे साय ।
एकान्न पाप तिणमें कहे, केइ कुबुद्धि उठाय ॥३॥
कहे मिश्र अद्वैत नही, अद्वैत हो मिध्यात ।
धर्म पाप एकान्त है, यो खोटो पखपान ॥४॥
अल्प-पाप बहु-निर्जरा, मूत्र भगोतो देख ।
मूलपाठ प्रभु भाखियो, (तेथी) कूड़ोयारोलेख ॥५॥
द्वेष अनुकम्पा-दान रो, ज्यारि हे घट माँय ।
निणने सन-वय लायवा, शानो इम समझाय ॥६॥
श्रुतु घौमासो आवियो, यथा यथे जोर ।
एट गज्राई छँडका, उपन्या लाख किरोर ॥७॥

एक वेद्या एक साधुरा, भक्त नो मन हुलसाय ।
 तिण येलामें नीसरथा, घेठा गाढ़ो मांय ॥८॥
 साधुभक्त नो साधुरा, दर्शन करे काम ।
 वेद्या अभिलापो तिको, जावे वेद्या घाम ॥९॥
 गाढ़ो चलता चग दिया, जीव अनन्ता जाय ।
 इतनामें विजली पड़ो, दोइ मुवा ते मांय ॥१०॥
 धर्मो पापो कोग छे, इण दोणां रे मांय ।
 हिंसा याने सारखी, देवो अर्थ घनाय ॥११॥
 तय नो ते चट ऊचरे, मारा दर्शन काम ।
 आना रस्नामें मुआ, तिणरा शुभ परिणाम ॥१२॥
 धर्म लाभ तिणने हुवो, हिंसा तणो तो पाप ।
 गाढ़ो आरंभ धी हुवो, यूं बोले ते साफ ॥१३॥
 वेद्या अर्थ नीकल्यो, तिण में धर्म न कोय ।
 एकान्त-पापरो कामए, यो साँवो लो जाय ॥१४॥
 वेद्या अर्थी जाणज्यो, एकान्त-पाप रे मांय ।
 दर्श(न)अर्थी गाढ़ी चढ्यो, धर्म-पाप येहुधाय ॥१५॥
 मन्दमति यों घोलिया, तव शानी कहे एम ।
 मिश्रतुमे नाहंमानता, (हिंवे)घोली घदलोकेम ॥१६॥
 तय पाछा ते यों कहे, दर्शन धर्म रो काम ।
 गाढ़ी चढ़नो पाप में, इम जूदा येहुठाम ॥१७॥

द्वाल-भातर्वी

१७००

१७००

कन्दमूल भगो लव. मानवी.

भुज सुदहो लो मयो नहिं जाय ।

ममह नेने एण्डादिग.

अचिक एन्नु भी लो दोवी भुज मिटाय ॥

भापयण विजयभर्म ओलमो ॥ १ ॥

कन्दमूल (जोह) भुजा पुन्य रो.

करणा में लो एतावे दाप ।

या अजा मन्दां नलो.

गोदो दोमे लो शानो ने मार. ॥ भ० ॥२॥

इम एखान्न पाप एम्पता.

नहिं टादो लो कृगुर काला नाग ।

इण अटा लो प्रहन एणिया.

पनी में लो जावे दुरा भाग ॥ भ० ॥३॥

भोलाजन भेला करी,

खोदा हेतू हो धोधा गाल बजाय ।

घर में घुस घुरकाय ने,

इण विष धो हो रया पन्थ चलाय ॥भ०॥४॥

सुणो दृष्टान्त हिवे तेहना,

किणविष बोले हो ते आल-संपाल ।

पुद्बन्त पुद्ब धो परख ले,

निरपुद्बी हो कंसे माया जाल ॥ भ० ॥५॥

(कहे) “सो मनुष्य ने मरता राखिया,

मूला गाजर हो जमोरुन्द खशाय ।

(पले) मरता राखिया सो मानवी,

कायो पाणो हो त्यांने अणगळपाय” ॥भ०॥६॥

इम भोलां (नि) भरमाषया,

गाजर मूलां रो हो मुख आणे नाम ।

बशी होको, मांस, मुरदा तणो,

नाम लेवे हां घ्रम घाञ्जण काम ॥भ०॥७॥

कासु-अन्न धो मरता राखिया,

तिण रो तो हो ठिपावे नाम ।

जाण खोटी-ध्रुवा चोडे पडे,

जद धिगडे हो जंघा-पन्थ रो कामा॥भ०॥८॥

कोई जीव मारे पंचेन्दरी,

मूख दुखडो हो मिटावण काम ।

(तिणने) समझाय अचित अन्न से,

पाप मिटायो हो कोई शुध परिणाम॥भ०॥९॥

जीव घचायो पंचेन्दरी,

तिण रो टलियो हो दुःख आरत पाप ।

मारणवाला ने टल्यो,

हिसाकारी हो मोटो कर्म सन्तापा॥भ०॥१०॥

हम मारतां ने मारणहार रे,

शान्ति करता हो सायक बुद्धिमान ।

एकान्त-पाप तिण में कहे,

ते तो भूल्या हो जिन-धर्म रो भान ॥भ०॥११॥

जीव घचे आरंभ मिटे,

तिण में पिण हो वतावे पाप ।

ते जीव घचे आरंभ हुवे,

(एबा) प्रश्न पूछे हो खोटो नीयत साफ॥१२॥

॥ बकरी और भूँचे की रत्ना ॥

हाल सातवाँ गाथा, ६. १० का भाग निम्न।



कई जगह माँ पेंडू नूँस दुग्धा ह मिटावत कार
 निजने समझाय अखिन अउ से दाय मिटाव ह कई दुग्ध परिवार
 आव दवाया पेंडू निजना दैलिया ह दु ख भारत पार ॥
 माँपवालाते दलिया हि साकार ह मंटे कम मताए । १०



..

..

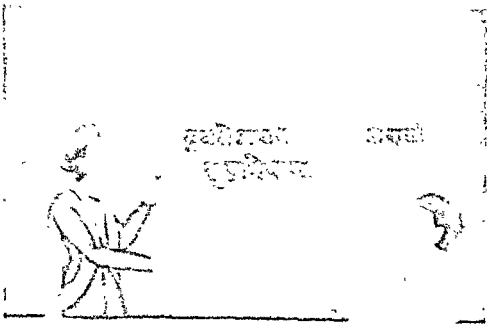
॥ हुक्का चुड़ाना ॥

ढाल सातवीं गाथा १८ का भाव चित्र ।



“पेट दुख था होको पांवना, अचित औपधे हो दांतां होको छोड़ाय ।
भारंभ टन्यो उहु कायना, इण काममे हो हुवा धमकेनाय ॥ १८ ॥





कोई ज्ञानी पृछे तेहने

एक रोगी होरयो अति दुखपाय।

तियां आयो वैद्य चलायने

मंमाई पाड़यारीतियारं चितमें चाय ॥२३॥

दयावंते सेज उपाय धी

रोगी ना हो दीना रोग मिटाय ॥

मंमाई धी मरती नर बच्यो

पाप धर्म रो हो देवों भेद यताय ॥२४॥

(कोई) भद्रिक अनुकम्पा करे,

अल्पारभी हो हलूकर्मो जोय ।

महारम्भो महा-परिग्रही,

तिणारे घट में हो करुणा किम होय ॥२५॥

मोटी हिंसा ब्रस-काय नो,

थावर नो हो छांटी सूत्र में जोय ।

जावश्यक, उपासक दशा,

भगोती में हो प्रभु भाखी सोय ॥ २६॥

मोटी हिंसा झुठ चोरी री,

श्रावक रे हो घन री मर्याद ।



मांस नाहार नरक (रो) हेतु है,

ठाणाजंग हो डवाई रं माँय ।

न्हें साधू राजां जैन रा,

मांस खादे हो साधुना उठ जाय” ३२॥

मांस पाणी एक सरिखा,

मूँ था पो हो तुम्हें कहता एम ।

(पोते) काम पढ़यो जद ददलिया,

परतीतो हो पारो जावे कैम ॥भयि०॥३३॥

पाणी, मांस जचिन पेहू,

पाणी पोवो हो मांस खावो नाय ।

तो सरखा हिवे ना रघा.

किम भोलाई ने हो नाख्या भर्म रं माँय ॥३४॥

पाणी पोवे संजम पले,

मांस खादे हो साधू नरक में जाय ।

(तेयो) सानों दृष्टान्त सरिखा नहों,

योग्य-जयोग्य हो त्या में जन्तर पाय ॥३५॥

जो सम परणामी साधु रं,

पाणी मांस में हो बहुलो जन्तर होय ।

मांस न खावे माधुजो,

फासुक पिण हो जागे नरक रो स्थान ।

जन्म, मांस सरीखो नहीं,

साधु श्रावक हो करे जन्म-जड पान ॥४१॥

जो श्रावक मांस खावे नहीं,

दृजा ने हो खवावे वेम ।

अनुकन्या उठायवा,

जणहूंतो हो यो घाल्या वेम ॥४२॥

अचिन तो येहू साराखा,

मांस खाया हो हंवे संजम रो घात ।

पाणी पीया संजम पले,

(तां) उथप गई हो सानों हेतु रो वान ॥४३॥

य खोटा दृष्टान्त कृगुरु तणा,

ते दीया हो भेटण दया धर्म ।

ते समदृष्टि श्रद्धे नहीं,

चोड़े जागे हो खोटी श्रद्धा रो मर्म ॥४४॥

जीवां री रक्षा जो करे,

मिड जावे हो तेना राग ने द्वेष ।

भूख मरतो हणे पंचेन्द्री,

करुणा कर हो तेने दे समझाय ।

फासुक सँ खडो देय ने,

जोव-रक्षा हो इणविव पिण धाय ॥५०॥

माहण माहण उपदेश यो,

बचाया हो पर-जोवां रा प्राण ।

या सत्य-वचन आराधना,

जोवरक्षा हो हुई परधान ॥भवि०॥५१॥

चोर लूटे घन पारको,

घन घणी हो मरणे-भारण धाय ।

समझाय चोरो छोडाय दी,

दीनां री हो रक्षा हुई इण न्याय ॥५२॥

शील खण्डे एक लम्पटी,

शीलवती हो खण्डन लागी काय ।

लम्पट ने समझावियो,

प्राण घचिया हो सती रा घर्म रे साय ॥५३॥

घन अर्थे हणे एक सेठ ने,

घन घणी हो दीनों परिग्रहो त्याग ।

झूठ चोरी व्यभिचारकरो,
 नाम लेकर हो तुम घालो भर्म ।
 झूठा हेतु लगाय ने,
 छोड़ दोनी हो तुम लाज रु शर्म ॥२०॥
 जीवदया-छेपी करे,
 मरता राखे हो मैथुन सेवाय ।
 निणरो उत्तर होवे सांभलो,
 मिट जावे हो चोरी पकवाय ॥भ०॥२०॥
 एक विधवा धारा पन्थ री,
 निज पूजनी रा हो दर्शन री चाय ।
 बीरा पूज्य रखा परगाम में,
 खरची पिन हो दर्शन नहिं पाय ॥२१॥
 व्यभिचार धो पैसो जोड़ने,
 दर्शन काजे हो आई पूज्यजो रे पास ।
 भावना भाई (माल) घेरावियों,

२ जैसा कि वे कहते हैं :-

जीव मारे झूठ घालने, चोरी करनेका परजोच बचाय ।
 घले करे अकारज पहचो, मरता राखे हा मैथुन सेवाय ॥२१॥

(मनुकथा टाल-७)

दर्शन दान रो हो तिणरे घर्म रो घाम ।
 घटी आरम्भ आश्रव सही,
 तिण बिना हो तिणरो किम घले काम” ६७
 (उत्तर) तो समझो इण दृष्टान्त धी,
 मैथुन सेवे हो जीव रक्षा रे काज ।
 ते परथम नारी सारखी,
 नहिं विवेक हो नहीं तिण रे लाज ॥ ६८ ॥
 कोई जीव यचावे गुण भरी,
 घटी आदिक हो मेहन रे साय ।
 अनुकम्पा तस निरमली,
 आरम्भ तो हो अणसरते कराय ॥ ६९ ॥
 व्यभिचार घटी सरोखेा नहीं,
 इम समझी हो मय कर्म कुकर्म ।
 समझे विपेकी विवेक में,
 अणसमझू रे हो उपजं अति भर्म ॥ ७० ॥
 शील खण्ड दर्शण करी कृण करे,
 तो जीव यचावे हो धृण मैथुन सेव ।
 कुहेतु कुगुरु रा काटवा.

100 100 100 100 100 100
100 100 100 100 100 100

100 100 100 100 100 100
100 100 100 100 100 100

100 100 100 100 100 100
100 100 100 100 100 100

100 100 100 100 100 100
100 100 100 100 100 100

100 100 100 100 100 100
100 100 100 100 100 100

100 100 100 100 100 100
100 100 100 100 100 100

100 100 100 100 100 100
100 100 100 100 100 100

100 100 100 100 100 100

100 100 100 100 100 100

100 100 100 100 100 100

100 100 100 100 100 100

100 100 100 100 100 100

मन्दमति हो सुग ने दुःख पाय ।

जीव दया रा द्वेषिया,

लंघी मति यो हो दुरगत में जाय ॥ ८४ ॥

मनिमारो*जाज्ञा राय (श्रेणिक) री,

या माखी हो सूतर में वात ।

पाप कहे श्रेणिक भणो,

ते तो बोले हो चोड़े झूठ मिष्यात ॥ ८५ ॥

“जमारो” धर्म जिन भापियो,

नृप पाल्यो हो पलायो जग (दिश) मांय ।

तेमां पाप कहे ते पापिया,

भोलां ने हो नाल्यां कन्द रे मांय ॥ ८६ ॥

(कहे) वीरजो नाय सित्तावियो,

पड़इ फेरजे हो थारा राज रे मांय ।

* जसा कि वे कहते हैं:—

श्रेणिकराय पड़हो किरावियो.

यह तो जानो हो मोय्य राजां री रोत ।

भगवन्त न सराहुयो तेहने,

तो किन्नि भवे हो तिन री मतीत ॥ ३० ॥

(अनुकम्पा डाल-७)

यो ह्युपम राजा श्रे णिक तणां,

आज्ञाकारी हो सुणायो जाय ॥९२॥

श्रे णिक ने प्रभु ना कायो,

घोषण करजे हो म्हारा स्थान रे काज ।

तां पाप ह्यो तुम कथन धो,

सेजा रों हो धीर ने दीनो साज ॥९३॥

बलि मोटा होता राजधी,

स्थान घोषणा (री) हो नहीं चाली घान ।

तां श्रे णिक घोषणा किम करी,

न्याय तोलो हो हिरदे साक्षात ॥९४॥

श्रीकृष्ण करी उद्घोषणा,

दीक्षा लेवो हो श्री नेम रे पास ।

साय करुं पिछला तणां,

ज्ञात में हो यो पाठ है खास ॥९५॥

आज्ञा न दीयी श्री नेमजी,

उद्घोषणा हो करी नगरी मंझार ।

(तां) धारे लेखे पाप ह्यो घणां,

दीक्षा दलाली (में)हो नहीं धर्म लिंगार ॥९६॥

अन्य नृप री चाली नहीं,

श्रेणिक ने प्रभु नहि कियो,
 घोषण कोजे हो न्हारे स्थान रे काम ।
 जाव-जाव कार्य करण रो,
 गृहस्थो ने हो केणो यज्यो श्याम ॥१०२॥
 समदृष्टि निर्मल भाव थो,
 स्थान-दलाली हो कीयो श्रेणिक राय ।
 तिणरे विवेक जति निर्मलो,
 कारण काज हो समझे मन माँय ॥१०३॥
 उद्घोषण आज्ञा में नहो,
 दीक्षा-दलाली हो निर्मल परिणाम ।
 धर्म-दलाली नीपजी,
 समदृष्टी हो करे एहवा काम ॥१०४॥
 नाम गोत्र सुणे साधु रो,
 जति फल कियो हो सूतर रे माँय ।
 कोणिक सुणतो (प्रभु) वारता,
 भक्ती रो हो फल मोटो पाय ॥१०५॥
 वारजी नाय सिखावियो
 मुझ वार्ता हो नित लीजे, मंगाव
 वली न जणाई आमना,

‘अपनी’ ‘अपनी’ ‘अपनी’ मणी,

‘अपनी’ ‘अपनी’ ‘अपनी’ मणी ॥११॥

‘अपनी’ ‘अपनी’ ‘अपनी’ मणी,

‘अपनी’ ‘अपनी’ ‘अपनी’ मणी ।

‘अपनी’ ‘अपनी’ ‘अपनी’ मणी,

‘अपनी’ ‘अपनी’ ‘अपनी’ मणी ॥१२॥

‘अपनी’ ‘अपनी’ ‘अपनी’ मणी,

‘अपनी’ ‘अपनी’ ‘अपनी’ मणी ।

‘अपनी’ ‘अपनी’ ‘अपनी’ मणी,

‘अपनी’ ‘अपनी’ ‘अपनी’ मणी ॥१३॥

‘अपनी’ ‘अपनी’ ‘अपनी’ मणी,

‘अपनी’ ‘अपनी’ ‘अपनी’ मणी ।

‘अपनी’ ‘अपनी’ ‘अपनी’ मणी,

‘अपनी’ ‘अपनी’ ‘अपनी’ मणी ॥१४॥

‘अपनी’ ‘अपनी’ ‘अपनी’ मणी,

‘अपनी’ ‘अपनी’ ‘अपनी’ मणी ।

‘अपनी’ ‘अपनी’ ‘अपनी’ मणी,

‘अपनी’ ‘अपनी’ ‘अपनी’ मणी ॥१५॥

(कहे) “मतिमार भी नक करी नहीं”,

तीर्थंकर पञ्चो मोटका,

ज्यारि नामे हो धां कियो पल्लवान ।

मतिमार घोपणा नहीं बरी,

धारा सुष धी हो (धारी) उधप गर्षान ॥१२०॥

जो रीत मोटा राजा मदी,

तेा पञ्चो हो पाली नहीं बेम ।

अनुकम्पा रा हो प धी,

नहिं सूजे हो निज सोल्या रो नेम ॥१२१॥

‘मतिमारो’ ने ‘दीक्षा’ री घोपणा,

राज-रीती हो केषल ते नांय ।

समदृष्टी राजा मणी,

कृष्ण, श्री णिक हो कौधी सूत्र रे मीया १२२।

दीक्षा रा उधघोपणा,

कृष्ण छोड़ी हो दूजा राजा री नाय ।

(पिण) निषेध नहीं हूग धान रो,

करो होसी हो कोई समदृष्टिराय ॥१२३॥

ब्रह्मदत्त पञ्चो भर्जा,

चिन मुनि हो समक्षायग आय ।

आरज कर्म ने आदरो,

जोव मेह छोड़ाविया,

*मरतिया मरखी हो फरक नहिं जाय ॥१२९॥

(उत्तर) भोला ने भड़काविया,

दृष्टान्त नी हो रची मायाजाल ।

(हिचे) करहो उत्तर दिन दिया,

नहीं कटे हो यांरी जाल कराल ॥१३०॥

काँटा थो काँटो काड़णो,

तेथी सुगते हो मन करज्यो रीस ।

कहेतु शल्य उबारवा,

करहा दृष्टान्त हो देजं विश्वा वीस ॥१३१॥

दो दार्यां जनुगगग तुम तणी,

पूज्य दर्शण हो गई गेल मे मांय ।

किणविव जाई दार्यां तुन्हें.

पूज्य पूछथा हो दार्यां कह्यो सुणाय ॥१३२॥

* उंता कि वे कहने हैं:—

पहल सेवत्यो आश्रव पांवनी,

तो उम दूरी हो बोयो आश्रव सेवत्य ।

केन पड़यो तौं ने ह्य पद मे.

धर्म हस्तो हो मे तो करिखो थाय ॥म०॥१५॥

कथाओं को धौरी श्रद्धा से देख ॥१३७॥

सेध्यों आश्रय एक पाँचमों,

तो दृष्टी आई हो पाँचों आश्रय से ।

दोषों से भेद कथाय दो,

आश्रय सत्यता हो धारें केषा से देख ॥१३८॥

सुण घमराया पृथ्वी,

उत्तर देना हो जडे श्रद्धा से देख ।

(दोनों) सरीसों कथां ज्ञाने नहीं,

लोक निन्दे हो (लागे) कलक से देख ॥१३९॥

दरता इर्ष्यादि पार्लिया,

गंगा पेंसों हो कथा दृष्टान सार ।

निर्णरी पुष्टि ना निर्मला

तेने हृषा हो धमकल अवार ॥१४०॥

पीजी कुलक्षणा नार ।

दृष्टान काज हो कथा आश्रवहार

सेध्यों ता महापापणा,

(विशेष) पिकलणा र हो धम नारा लिंगार १४१॥

तय धौल्यों निहां समस्तिन

धारां श्रद्धा हो धार कथन १४२ ।

दर्शन रा हो भाव किंग विघ होय ।

यात असम्भवती दिने,

दृष्टान्ते हो कदा मानां माय ॥१४७॥

तो मनि खोटी तेहनी,

कुकर्म्मिणी हो मोटो कीना अन्याय ।

पाप सेव्यो अति मोटको,

फिट-फिट हो हूये जगन रे माय ॥१४८॥

(बलि) लोभ मिट्यो नहिं तेहनो,

तीव्र पथियो हो निगरं मोह जंजाल ।

तेथी पापणी दूजो नार है,

दर्शन रो हो थोथो आल-पंपाल" ॥१४९॥

न्यायपक्षी तव बोलियो,

सेवारो हो धारे दीखे राग ।

तेथी सिद्धा बोलिया,

(पिण) जोवरक्षा में हो दोना सत्य ने त्याग ॥१५०॥

कथन विचारो तुम तणो,

दो वेश्या रो हो थां लीना नाम ।

गेणाने व्यभिचार थो,

जीवरक्षा रो हो त्यां कीदो काम ॥१५१॥

लज्जा छोड़ी हो लेवे दृष्टान्त सुंद ।

जोषों की गूना उदाहरण।

छोटी कथनों की हो मांछी अति गूढ़ ॥६६॥

(शरी) "एक देवता सायन कृत (शाम) करी,

सहस्र नामों हो ले कर्त्त पर सांप ।

दृजा कर्त्तव्य करी आपणों,

मरना सारवा हो सत्य जोव छोड़ाय ॥६६॥

फन आपणों छोटा कर्त्तव्य करी,

निरा रे लान्या हो दोनों विष कर्म ।

तो दृजा छुड़ाया तेहने,

उणें लगे हो हुवा पापने घर्म" ॥६७॥

एदों खोटी न्याय लगाय ने,

जाप मने हा करं खोटी थाप ।

पिहु विष पाप पेडी कियो,

दृजा रे हो कहां घर्म ने पाप ॥६९॥

होवे कथन हमारो सांभलो,

में (तो) नहीं करां हो घर्म-पाप रो थाप ।

मिथ्याहेतु मिथ्यामनि करे,

तेने उत्तर हो म्दं देवाँ सार ॥७०॥

(एक) नारो कुकर्म सेव ने,
 सहस्र नाणो हो लाई घर मांघ ।
 दूजो सेवो व्यभिचार ने,
 द्रव्य खरचे हो साधु सेवा रे मांघ ॥१७१॥
 घन आणो खोटा घून करी,
 तिण रे लग्या हो दोनों विघ कर्म ।
 तो दूजो सेवा करी थांहरो,
 पारे लेखे हो हुयो पाप ने घर्म ॥१७२॥
 पाप गिणे व्यभिचार में,
 उणरी सेवा में हो ते न गिणे घर्म ।
 पांते अट्टा रो खपर पोने नहीं,
 दया उठाया हा बांधे भारी-कर्म ॥१७३॥
 इम कछा ज्याय न उपजे,
 चर्चा में हां अटके ठामोठाम ।
 तो पिण निर्णय ना करे,
 जोवरक्षा में हो लेवे पाप रो नाम ॥१७४॥
 जीव, द्रव्य, अनादी शासनो,
 प्राण-प्रजा हो पलटे पारंपार ।
 ते प्राणों रो घात हिंसा कहो,

रक्षा में हो दया करो सुखकार ॥१७५॥
 ते रक्षा करे समभाव धी,
 समदृष्टि हो नंबर गुण पाय ।
 मोक्षनागं रक्षा कही,
 मोक्ष-अर्थो हो करे जनि हर्षाय ॥१७६॥
 पृथ्व्यादिक छहंकाय ना,
 प्राणरक्षा में हो करे पाप बजाय ।
 जाँ हिंसा-रक्षा जागो नहीं,
 खोटी कर रया हो निजमन नी लाग ॥१७७॥
 (बलि) धर्मपावर नहीं सारखा,
 जांरा प्राणां में हो कण्ठो करक अपार ।
 तेयो हिंसा भाटीं करक हे,
 लृप्त सूक्ष्म हो मृत्तर निरथार ॥१७८॥
 निम शक्य अशक्य रा भेद ने,
 हिंसा रक्षा में हो समक्षो बतुर सुजाग ।
 (वेदं) सहुचय नाम पताय ने,
 शक्य छोड़ने हो करे अशक्य (री)नाग ॥१७९॥
 पावर रक्षा करो ना सके,
 धर्म जीवीं हो हो करे हेद ने म्पाय ।

निग ही पाप ही समे पुमाविर्षी,

रुग ही हो ठेव भया यह माय ॥१८७॥

विविध भाव रूपा करे,

परिषद ही हो समना ने इदाय ।

मेरे मात हा धर्म ही नाम ले,

ताप बनान हा कुर्बुदि भदाय ॥१८८॥

समना बनाना धर्म (रुप) माला,

इस बात हा नेन पठना गम ।

धर्म समना परिषद मुख हा,

मानु (ने) दिया हा धर्म हाव केम ॥१८९॥

(कहे) समना बनाना धर्म हे,

समाजक हा धान ही नदि पाय ।

ना जाव(शा र काम),

(परिषद)नन समना हा मेरे माय मे नरिय ॥१९०॥

साधना अटारव शान,

परिषद उपाय हा मिनन-मिनन न एक ।

समना धो परिषद कथा,

उपकारे हा उपधि ने लेश ॥१९१॥

उपकार समना एक हे,

इम पीले ही कुण्ड निशंक ।

सूत्र बचन उत्थाप ने,

निध्यान रा हो मारे नाटा-डंक ॥१८३॥

दान, शोयल, तप भावना,

मोक्षमार्ग हो चारों सुखकार ।

लभयदान भय भेदे कथो,

जो देवे हो पावे भवपार ॥१८४॥

चतुकल्पा अर्थ प्रकाशिनो,

ठाल जोही हो चूह शहर मैजार ।

लगगोले छियांसी तणे,

श्रावण सप्तमी हो सुखदायो चार ॥१८५॥

नातरी ठाल मन्मूर्च्छन ।



ढाल--आठवीं



(तर्ज—अनुकम्पा सावज मत जाणो)

द्रव्यलाय में पले जद प्राणी,

आरत-ध्यान पावे दुख भारो ।

बिल-बिलता रूध्यान जो घ्यावे,

अनन्त संसार पथे दुखकारी ॥

चतुर धरम रो निर्णय कीजे ॥१॥

कोई दयावन्त दया दिल धारो,

जग्नि में बलता ने जो बचावे ।

द्रव्य भाव दया तिणरो हुई,

विवरो सुणो तिणरो शुद्ध भावे ॥च०॥२॥

द्रव्ये तो उणरा प्राण रो रक्षा,

भावे खोटा ध्यान घटाया ।

यह उपकार इणभव परभव रो,

विवेक विकल यों भेद न पाया ॥च०॥३॥

द्रव्य आगसे बलता राख्या,

भाव आग तिणरो टल जावे ।

द्रव्य, भाव रो नाहीं निवेरो ।

दयाहीन कुपन्थ चलायो,

त्याँ कूगति सन्मुख दियो डेरो ॥चतु०॥१॥

स्वारयत्यागी परउपकारी,

दुखी ददों रो दर्द मिटावे ।

ते पिण भाठा-ध्यान मिटावण,

तिण में पाप मिध्यातो घतावे ॥चतु०॥१०॥

(कहे) “साधु गृहस्थ ने जोपघ देने,

दुःख आरत निणरो न मिटावे ।

तेथो पाप में गृहस्थ ने केवां,

साधु न करे ते पाप में आवे” ॥च०॥११॥

(उत्तर) चौमासे उत्पत्ति जीवां री जाणो,

गामानुगाम विहार न करणो ।

त्रिविधे (त्रिविधे) साधू त्यागज कीषा.

सूत्र में साधु ने घनायो निरणो ॥च०॥१२॥

साधु न करे ते पाप में गावो,

तो चौमासे (में) साधु ने जाणो न जाणो ।

गेही चौमासा में वन्दण जावे.

(तो) तिणमें एकान्त-पाप घनाणो ॥च०॥१३॥

छोड़ावा में न्हें धर्म तो जाणां ।
 (पिण) सगले ठिकाने जाय ने हिंसा,
 छोड़ावा रो उद्यम किम ठाणां ॥३॥२८॥
 तो इमहिज समझो रे भाई,
 कोड़ादि रक्षा धर्ममें जाणां
 मार्गादिक में सगले ठिकाने,
 बचावण रो उद्यम किम ठाणां ॥च०॥२९॥
 हिंसा छोड़ावा सगले न जावां,
 तिम ही जीव बचावा रो जाणां ।
 जीवरक्षा रो छेप घरी ने,
 मिध्यामति कथां ऊंधां ताणां ॥च०॥३०॥
 आपणा व्रत री रक्षा करे और,
 परजावां रा प्राण बचावे ।
 हिंसरु धी मरता जाणां ने,
 उपदेश देई जीव छोड़ावे ॥चतुर०॥३१॥
 हिंसादि अकृत्य करना देखी,
 भेषचारी कहे इट समझावाँ ।
 गृहस्थ पग हेटे जीव आवे तां,
 तिण ने तो, कहे न्हें नाय पतावां- ॥३२॥

बोल बदल मिथ्यामत सेवे ॥चतु०॥३७॥

(कहे) "हिंसादि अकृत्य करता देखी,

उपदेश देई में हिंसा छुड़ावां ।

अकृत्य करता रा पाप मेटण में,

फुरती करां में देर न लावां" ॥चतु०॥३८॥

*डफोरसंख ज्यों घात या धारी,

काम पहूथा से छट नट जावो ।

गृहस्थी रा पग हेटे जीव भरं जय,

हिंसा छोड़ावण तुम नहीं चावो ॥३९॥

तेल डुलण दृष्टान्त रे न्याय,,

पगतल जीव यतावणो खोटो ।

ते दृष्टान्त थी धारी श्रद्धा में,

हिंसा छोड़ावण में हांसी नांटो ॥४०॥

युक्ति पे युक्ति सुणो चित लाई,

जीव वचावणो धर्म रे माई' ।

जो जीव यचावा में पाप यतावे,

वाने उतर (यो) दो समजाई ॥४१॥

जो कहते हैं, पर करते नहीं, उन्हें डफोरसंस घटा जाता है ।—संग्रहक

जो अग्नि उठे तो लाय लागे ऐ,

(नय) गृहस्थ ने अनर्थ से पाप पावे ॥४३॥

निणने यज्ञ ने पाप छुड़ावो,

अनर्थ होता ने अटकावो ।

जो निणने तुम चर्जो नहीं तो,

हिंसा छुड़ावां यूं छूठ सुणावो ॥४४॥

हिंसा छुड़ावाँ यूं सुख से षोले,

तेल खुं होतो हिंसा न छुड़ावे ।

यह खांटी श्रद्धा उघाड़ी दीसे,

अन्तर अंधारो नजर न आवे ॥४५॥

(कहें) “पग से मरना जीव तुम पनावो,

तेल से मरता नां थें न पनावो” ।

(उत्तर) खांटा पालो मन रं मँते धें,

म्हारें तेल पगां रं सरीखां दावो ॥४६॥

पग से मरना ने तेल से मरता,

धुनि जांवां री रक्षा में धर्म पतावे ।

म्हारी तो श्रद्धा कंठह न अटके,

तो अणद्धंता सन पर ते कलंक चढ़ावे ॥४७॥

कठे कहे “हिंसक (ने) समझावां,”

धारा हेतु री भाग्युं लेतो ॥ चतुर०॥५०॥

करता विहार मारग में धारा,
 श्रावक मामा मिश्या आवे ।

मार्ग छोड़ो ने जजड़ जावे,
 प्रसथावर री हिंसा थावे ॥चतुर०॥५१॥

श्रावक ने उरुपंथ जाना,
 घनधावर (रो) हिंसा करता देखा ।

(जो) हिंसा छुड़ावा में धर्म धें मानो,
 तो श्रावक ने वर्जणो इण लेवे ॥५२॥

हिंसा छांड़वगो मुख से पाले,
 धोधा पादल जिम ते गाजे ।

श्रावक वन (उजाड़) में जांब ने चोथे,
 मीन साजे वर्जना फ्यो लाजे ॥चतुर०॥५३॥

कहो पकरा एणना ने समझावां,
 (तहां तां कसाई) समझे निइवय नहिं जाणा

श्रावक ने वन में हिंसा था न वर्जे,
 जहां छूटे हिंसा प्रसथावर प्राणो ॥चतुर०॥५४॥

कसाई केणो माने न माने,
 श्रावक तो धारा अनुरागा ।

जीव बनावा में पाद बनावे ।

तो नेहिज हेतु भी हिंसा छुड़ावा में.

तेना धरदा में दृष्य भावे ॥ पतु० ॥२८॥

(कोई) अन्या पुण्य मासान्तर जानां,

जांय बिना हिंसा किम शले ।

कोही गजाया मारना जावे,

धर्मशास्त्र (जीव)पर पग देई चाले ॥च०॥३९॥

थें पिन सहजे भाये ही जायां.

अन्या ने हिंसा करना देखा ।

पग-पग हिंसा थें न छड़ावो.

(नेथो) खांश बोरुण रो नुम लेखो ॥च०॥३॥

(त्या जंघ. ने) जनाय जनाय ने हिंसा छुड़ाणी

कोही मांसादिक वाधनें जावे

धर्मशास्त्र जावा या धर्मनाज हेवे ।विश०॥२॥

बेधारा सहजे भाये ही जाना

अंधा या पग मं मरना जायाने धर्म ।

यह पग-पग जाया ने नहा बनावे.

तो कोही धरदा जानज्या इन लेखे ।विश० ॥ २॥

पड़न मरे हिंसा बहुत धारो ॥चतुर०॥३३॥

गृहस्थ रे ज्ञान न पाप लागण रो,

ते कदा धारे समझ में जायो ।

धे हिंसा देखो छोड़ावगो वेवो,

[नो] जागे दुस्ता हिंसा धो कणों न मुकावो ॥६४॥

[कहे] "गृहस्थ रो उपयो सूं जोव मरे छे,

सर ठाढ़ यतावा ने क्यो नहिं जावोः॥"

नो उत्तर सिद्धो धारा हेतुरो

हिंसा छोड़ावा ने धे [क्यो] नहो धावो ॥६५॥

किणहिक ठौर हिंसा छोड़ावे.

किणहिक ठौर शंका मन जाणे ।

मिथ्या उदय धो समझ रहे नहो,

अज्ञानी जन नो ऊंची नाण ॥चतुर०॥६६॥

* जैसा कि वे कहते हैं

इत्यादिक गृहस्थ रे अनेक उपधि सु

ब्रह्मधायर जाव मुवा ने मरसो ।

एक पग हेठे जाव यतावे,

त्यां ने सगलो हो ठौर यतावणा पड़ता ॥ ३ ॥

(अनुकम्पा टाल—८)

RUGARCHAN BHAIRODAY SETHIA

JAIN BHADRAI-BHARATI, N.Y.

LIKANEH, MISPOTANA.

२३५

अवसर थो हिंसा छुड़ावे,

अवसर जीव बचावा जावे ॥चतुर०॥७१॥

जीव बचावगो हिंसा छुड़ावगो,

दोनां रो एक हो मनज्ञो लेखो ।

एक में धर्म दूजा में पापो.

इम श्रद्धे ने मिथ्यामनि देखो ॥चतुर०॥७२॥

गृहस्थी रा पग हटे जीव आवे तो,

साधु बनावे तो पाप न चाल्यो ।

भेषधारी निणमें पाप बनावे.

परतत्व धांचो कृगुर्ण घाल्यो ॥चतुर०॥७३॥

(कहे) "ममवसरण जन जाना नै जाना.

केट्टे रा पग से जीव मर जाया ।

जो जीव बचाया में धर्म होवे तो.

भगवन्त कटेतो न टीन्ने बचाया ॥चतुर०॥७४॥

नन्दण भनिहार डेटकां हांय ने,

बौर बन्दण जाना मारग मांयो ।

निगने बींध मारयो श्रं गिक ना पत्तेरं,

बौर साधु सानांमेळ क्यो न बचायो ॥७५॥

"तेथो जीव बचाया में पाप बचावां"

तिंसा छोटाया तां धर्म पचाये,

जोय पचाया पाप जो पावे ।

जोयो धरता या पत-पग अटके,

साण करो-करी दुर्गति मेरे ॥चतुर० ॥८१॥

श्रावक रो नाम तो अलगो मेला,

साधो न कर्न पमुय लाये ।

श्रद्ध, क्षेत्र, फाल, भाव रे अवसर.

साधु कार्य किया गुण पावे ॥ चतुर० ॥८२॥

मज्जा, ध्यान, तप विहार चिन्तणो,

व्याख्यान, ध्यायन धर्म रो कामो ।

फल पुद्धि और क्षेत्र फाल रे,

वियेक करे साधु गुण घामो ॥चतुर० ॥८३॥

पिन अवसर ये नांय करे तां,

मज्जा ध्यान न पाप में आवे ।

(निम) पिन अवसर जोय नाय छुड़ाया,

(तिर्या) जोय छोड़ावगो पाप न थावे ॥८४॥

कदा पेई एम पल्पे,

साधु-श्रावक (रो) अनुकम्पा एको ।

साधु करे तिम श्रावक ने करणी,

पिण काम पड़े जय फिरता ही देखो ॥८५॥
 साधु, साधु थो मरना जीव बनावे,
 पाप टले अनुकम्पा गावे ।
 श्रावक, श्रावक र्थी मरना जीव बनावे,
 झटपट तेने पाप बनावे ॥चतुर० ॥८६॥
 श्रावक श्रावक ने(मरता) जीव बनाय,
 (तां) किमा पाप लागे किमां घन भागे ।
 निण रों तो उतर मूळ न आवे,
 थंथा गाल बजावा लागे ॥ चतुर० ॥८७॥
 मिद्वान्त (रा) बल बिना योले अज्ञानी,
 संभोग (री) नाम अनुकम्पा में लावे ।
 गालां रा गोला मुख में चलावे,
 ने न्याय सुगों भविष्यण चित चावे ॥च०॥८८॥
 माधु रे संभाग श्रावक में नार्थी,
 (तेर्या) जीव बनाया में पाप बनाआ ।
 (तां) श्रावक माधु ने जाय बनावे,
 निण में ता घम तुमें कयां गायो ॥८९॥
 जद कजे म्हारी किमा दलाई,
 (तेर्या) घम रा काम कियां मुखदाई ।

(नो) श्रावक श्रावक ने (मरना) जीव

(नो) यो पिग धर्म मानो यथो न भाटी॥१७॥

साधु धी मरना जीव पचाया,

श्रावक धी मरना निम ही पचाया ।

एक में धर्म ने दृजा में पापो.

ई शगड़ा धारा अट्टा में मरिचिया ॥च०॥११॥

धारा प्रकार ग संभोग भाग्या.

मृत्र समापंग मारि देखा ।

जीव यनाया संभोग लागे,

एसा गार्हा मृत्तर में लेखा ॥चतु०॥२२॥

श्रावक, श्रावक ने जाव यनाया.

पाप लागे यो मन काढ़यो कुरो ।

तिण लेखे जीवाँ ग भेद सिन्ध्याया.

धौरी अट्टा में (होसो) पाप रो पुरो॥१३॥

(कहे) "जीवाँ रा भेद तो ज्ञान रे खान्तिर,

(बली) दया रे खान्तिर न्हें पिण यतावाँ ।

भूत भविष्य में जीव यनाया.

धर्म रो काम न्हें कहि समझावाँ ॥च०॥१४॥

वर्तमान (काल) पग हेठे जाया यनाया,

इस श्रद्धा से निर्गम न जाये अज्ञानी,

दण्ड निष्ठण लियो संभोग शरणा ।

पाप छुड़ाया संभोग में नारी,

गढ़ा हो तो परा भवि निर्णो ॥४०॥१००॥

नहीं मारण ने जीव पनाया,

संभोग लागे ऐसा पनावे ।

तो पाप छुड़ावण परतए पनावो.

भाग्यपणा थारा श्रद्धा में जावे ॥४०॥१०१॥

हाथ लागी गृहस्थो जप देखे.

(नां) तुर्न पुसावे रक्षा मन धारी ।

इण रक्षा से काम गृहस्थ करे छे,

निज में एकान्त पाप कहे सांगचारी ॥१०२॥

(कहे) "लाप में पले जारे करज चुके छे,

(सांध्या) कर्म छुटग से निर्जरा भारी ।

पिच पड़ ज्यानि जां कोइ काड़े,

वह होवे पाप नगो अविकारो" ॥१०३॥

इम पशता रे कर्न कटता पनावे,

काड़गवाला-ने पाप पनावे ।

स्पारी तो तप परतीनी जावे,

बली हलुशर्मापणो गुणां में,

तुमे कहो धारा ग्रन्थ में दाग्या॥च०॥१०९॥

अल्पारम्भो गुण आचरु देगो,

उवाह सुगडाअंग में देखां ।

माहारम्भो आचरु नहीं होवे,

(तेथी) अल्पारम्भो आचरु रो लेखो॥११०॥

लाय लगावे ते महा अवगुण में,

मूय मांहीं जिन इणविथ भाख्यो।

(अल्पन्त) ज्ञानावर्गो आदि.कमे रो कर्ता,

नेथा महाकर्मां प्रभु दाख्यो ॥ १११ ॥

महा क्रियायन्त तेने जाणो,

महा आश्रव करु बन्ध ना करना ।

परजीव ते महा वेदनदाता,

एखा दुगुण ना ते धरना ॥ च० ११२ ॥

लाय चुझावे तेना गुण ना,

भगवतो मांहीं इणविथ बोले ।

अल्पकर्म ज्ञानावण्यादि,

तेथी हलुकर्मा इण तोले ॥ च० ॥ ११३ ॥

अल्पक्रिया अल्प आश्रवो ते छे,

पारा धन-विध्वंसन नाहीं,

जलधारम्भो ने रम्य * पनायो ।

जलधारम्भे मध्यांभ नाहीं,

धो विग गुग हे पठे होऊ नायो॥व-॥२६२॥

जग्नि धो नरना जोव पचरा रा,

दोष धो तुन इहाँ जवला पोली ।

“जलधारांभ वो गुग ने नाहीं”,

[घो] नव्य जोइयो तुन हिरामें तालो॥२२०॥

जलधारांभ श्रावक [रा] गुग पोले,

निरांतरो साधु [ग] गुग जागो ।

नेधो साधु-श्रावक रो धर्म हे जुहो,

दो विध्व धर्म (न) मृत्य पखानो॥व०॥२२१॥

* इति । इ वे कर्ते इ -

अथ ह्यं तो मरुकांतिक धर्मो गुग कला । सति इ ध नार,
तना, सोन, पकळ, जोग इत्या अज अज, अज तनारं,
इत्य गुग कत देवता हुवे छे ।

(धन-विध्वंसन-२: ६८)

धर्मो विध्व धर्मो हे -

धर्म अज अज, अज तनारं, अज इत्या कला ।
तनारं इन जातिदे हे धर्मो इत्या नही ए गुग छे ॥

(धन-विध्वंसन-२: ६८)

अनिचार टलवा रो धर्म है भागे ॥१२६॥

साधु रा मातपितादि गृहस्थो,

(जाने) साधु जिमावे तो दूषण लागे ।

गृहस्थो (अपना) मनुष्यों ने भूखा राखे तो,

दूषण लागे पेलो व्रत भागे ॥चतुर०॥१२७॥

गृहस्थी, गृहस्थी रो थापण नहिं देवे,

दूजो तोजो व्रत तिण रो भागे ।

थापण देवे साधु न देवे,

पिण गृहस्थ दिया व्रत रेवे सांगे ॥च०॥१२८॥

इम जनैरु षोड साधु रे दूषण,

ते गृहस्थो रे व्रत रक्षा रा टासो ।

(तेथो) गृहस्थ ने साधु रो जानार जुदो.

एक कहें ते मिथ्यात न धर्मो ॥च०॥१२९॥

सुगे (बत्वाण) धर्म जाई पढ़ने पागो.

एकान्त पाप नो तिणने न देवे ।

लाय से काहु मनुष्य पचाया.

एकान्त पापो रो पद देवे ॥चतु०॥१३०॥

(इम) उल्लो कपनी कवी-कथो ने,

मोटा ने कुपन्य चढाया ।

अग्नि थो पलना मनुष्य निकाले ।
 दोयां रो एक हो लेखो पनावे,
 वे अन्याय रे मारण चाले ॥चतुर०॥१३६॥
 षुगुरु रा मन रा श्रावण श्राविका,
 अग्नि तां नित हो लगावे दुजावे ।
 (ते) मनुष्य रा मारण जेसा महापापी,
 धारो श्रद्धा रे लेखे थावे ॥चतुर०॥१३७॥
 मोदी में मोदी मनुष्य रा हिंसा,
 अग्नि रो हिंसा नृक्ष भालो ।
 लाय दुजावे ते अलभारं भो,
 भगवनो नृत्र छे निग रो सान्नी ॥१३८॥
 वकरा पचावग मनुष्य ने मारे,
 अग्नि थो पलना मनुष्य पचावे ।
 दोयां ने मर्गिन्वा कुगुरु केवे,
 ते मज्ञ मिथ्यानि चोडे दावोचः ॥१३९॥
 वकरा पचावग मनुष्य ने मारे,
 ते तो पलनच छे कुकर्म ।
 अग्नि थो पलना मनुष्य दवावे,
 अन्पारन्भो ने दयः वन्ने ॥१४०॥१४०॥

दोहा

जीवहिंसा छे अति घुरो, निज में दोष अनेक ।
जीवरक्षा में गुण घणा सुणजो जाणि विवेक ॥१॥

हाल-नवमी

(तर्ज—यो भव. रत्नचिन्तामणि सरिखो)

रक्षा देवो सब (ने) सुखदाई,

या मुक्तियुरो नी साई जो ।

साठे नामे दया कही जिन,

दशमां अंग रे माईं जो ॥

रक्षा धरम भ्रो जिनजो रो वाणी ॥ १ ॥

असथावर रे छेम रो कता,

अहिंसा दुःखहतां जो ।

दोष तणो परे घ्राण अग्ण या,

गणधर एम उचरताजो ॥ ग्ला० ॥ २ ॥

^१ 'निर्वाण' ^२ 'निर्वृत्ति' नाम हे इणरो,

^३ 'समाधि' ^४ 'शक्ति' न्यह्या जा ।

'कोर्ति' जग प्रसिद्ध (गो) कर्ता,

'कान्ति' अद्भुत रूपोजो ॥रक्षा०॥३॥

'नि' आनन्द रे हेतुपगा भां,

'विनि' पाप विघर्ता जी ।

'श्रुनाक्षा' श्रुतज्ञान धो उतरो,

सृष्ट कर से 'सृति' जो ॥ रक्षा०॥४॥

रक्षा ही रक्षा धा 'दया' कर्तोजे,

'सृक्ति' अरु-क्षान्ति' (पन्ना या क्षमा) उद्धारोजो

'समर्पितनो' आराधना गर्तोजे,

बदलावा 'रक्षा' से बाराजो ॥रक्षा०॥५॥

सर्व धर्म अन्तर्धान बदाय,

सहर्ता ॥गो॥ रक्षा जी ।

बाजा बन् इत रक्षा रे कर्ता,

जिसे अर्थ न' बाराजो ॥रक्षा०॥६॥

जिसे धर्म न' इत रक्षा रे

तेथो 'बोत्रि' कहिये जो ।

^{१७} 'बुद्धि' ^{१८} 'धृति' ^{१९} 'समृद्धि' ^{२०} 'ऋद्धि' ^{२१} वृद्धि,

^{२२} 'स्थिति' शाश्वतो एथो लहिये जो ॥१०॥७॥

^{२३} 'पुष्टि' पुण्य रो उपचय इण धो,

^{२४} समृद्धि लावे 'नन्दा' जो ।

जोवां रे कल्याण रो कर्ता,

^{२५} 'भद्रा' भणे मुनिन्दा जो ॥११॥८॥

^{२६} 'विशुद्धि' निर्मलता दाता,

^{२७} लब्धि रो दाता 'लद्धि' जो ।

सब मन में प्रधानता इणगे,

^{२८} 'विशिष्टः' प्रसिद्धो जो ॥१२॥९॥

^{२९} 'कल्याणा' व ल्याण रो दाता

^{३०} 'मंगलिक' विघ्न मिटावे जो ।

^{३१} हर्ष करे तेथो यह 'प्रमोदा'

४०

हिंसा उपरति 'संयम' कहिये,

४१

'शीलपरोधर' जाणो जी ।

४२

४३

४४

'संवर' गुप्ति 'व्यवसाय' नामे,

निश्चय स्वरूप थो जाणोजी ॥रक्षा०॥१५॥

४५

'उच्छय' भाव उन्नतता समझो-

४६

'यज्ञ' भाव पूजा देवां री जी ।

गुण आश्रय रो स्थानक निर्मल,

४७

'आयत्तन' नाम छे भारी जी ॥रक्षा०॥१६॥

४८

'यजन' अभयदान थो ज.णो

जीवरक्षा रो उपायोजी ।

नेथी यतना इण ने कहिये-

पर्याय नाम कहायो जी ॥रक्षा०॥१७॥

जीव वचाया में पाप पनावे-

ते कुपन्ये पड़िया जी ।

परतख पाठ देखे नहीं भोला,

हिरदा मिध्यात से जड़ियाजो ॥र०॥१८॥

स्यवा पूजा अर्थ अगो रो,

भाव से देव पूजिजे जो ।

द्रव्य सावज पूजा हिंसा में,

ते इहां नाय गजोजे जो ॥ रक्षा० ॥ २३ ॥

^{५८} 'विमल' ^{५६} 'प्रभासा' अठ ^{६०} 'निर्मलतर',

साठ नाम प्रभु भाख्या जो ।

प्रवृत्ति और निवृत्ति रा योगे,

भिन्न-भिन्न नाम ये दाख्या जो ॥२०॥२४॥

नहिं हणनो निवृत्ति जागो,

परचरतो गुण रक्षा जो ।

प्रवृत्ति निवृत्ति दोनों अंलखाया,

यां (साठ) नामां रो दीना शिक्षा जो ॥२५॥

त्रिविधे-त्रिविधे छः काय न हणनो.

हणने तो धर्म पनावे जी ।

त्रिविधे-त्रिविधे ज वरक्षः कण मे,

पाप कहि धर्म लजावे जो ॥ रक्षा० ॥२६॥

नहिं हणनो ने रक्षा करणो,

ते प्रभु आज्ञा जारायो जो ।

(तो) मरणवालो पिण पाप थी बचिधो,

तेनो करुणा में पाप क्यों गावोजी ॥रक्षा०॥५९॥

हिंसक (री) करुणा में धर्म बतावे,

मरणेवाला री में पापो जी ।

या खोटी श्रद्धा परनख दीसे,

जे धापे ते पामे सन्तापो जी ॥रक्षा०॥६०॥

(कहे) “छकाया रा शत्रु जीव अघनी,

(त्यारी) जीवणो-मरणो न चावे जी ।”

तो पाणी थी इन्द्रि माखा काढ़ो,

(तेथी) धारी श्रद्धा खोटी धावेजो ॥रक्षा०॥६१॥

(कहे) ‘मैं तो जीवणो मरणो न चावाँ,

पाप टालणो चावां जी ।”

(उत्तर) नां जीवरक्षा पिण पाप टालण में,

स्व-पर नां पाप बचावा जी ॥रक्षा०॥६२॥

मारण ने मरणेवाला रो,

पाप छोड़ावा बचावां जी ।

मरणेवाला री दया किया सुं,

धामक रा पाप छोड़ावां जी ॥रक्षा०॥६३॥

जीव मरीप, जनाथ दुःखी री,

मरता शोध ने पोर पनावे,

जामें पाप पनावे जो ।

ते पाप पनाया समकित नावे,

जांता मूल-उत्तर ग्रह जाव जो ॥रक्षा०॥६९॥

(जा बटे) "त्रिविवे-त्रिविवे जाव-रक्षा न करणो"

(उत्तर) तो हिमक री हिंसा छोटाया जो

मरता जीवां री रक्षा होनी,

धारी श्रद्धा तुं पाप कमाया जो ॥रक्षा०॥७०॥

"वीच में वद पाप नाय छाड़ावगां,"

इसहो धो धर्म पनावो जो ।

तो हिमक पाप करे निग वीच में

उपदेश देण क्यो जावो जो ॥ रक्षा० ॥७१॥

छे कारण जाव-हिमा करे काई,

अहित अवोध ते पावे जा ।

जीवरक्षा धो समकित पावे,

अहित त्रिकाल न धावे जो ॥रक्षा०॥७२॥

जीवहिंसा प्रभु खांठो पनाई,

(आठ) कमां री गांठ बंधावे जो ।

जीवरक्षा प्रभु आछो भाखो,



निण में एकान्त पाप बनावे,

ते एकान्त निध्याकर्मा जो ॥रक्षा०॥ ९७ ॥

कोई जीवाँ रा दुःख भेट्या में,

एकान्त पाप बनावे जो

त्याने जाण मिले जिन धर्म रो,

(तब) किग विव मारग लावे जो ॥रक्षा०॥ ९८ ॥

लोह नो गोलो अग्नि तपायो,

ते अग्निवर्ण कर नातो जी ।

[ते] पकड़ संडासं लायो निण पासे,

(कहे) बलतो गोलो जेलो हाथो जा ॥र०॥ ९९ ॥

(जाप) दयाहोण हाथ पाछो खेंच्यो,

तब जाण पुरुष कहे त्याने जो ।

थें हाथ पाछो खींचो किन कारण,

धारो श्रद्धा मन राखो छाने जो ॥र०॥ १०० ॥

जद कहे गोलो म्हें हाथ में त्यां तो,

(भ्रागे) हाथ बले दुःख पावां जी ।

(तो धारा) हाथ बालना ने जो म्हें बरजां,

तो धर्मा के पापा कहावां जो ॥र०॥ १०१ ॥

(कहे) “(धारा) हाथ बलता ने जो कोई बरजे —

अबल्य जीवों से पाप हुई मिली,

हृषी से बड़े जिनसेही जी ।

पुत्रका भा बरसाए, बरसाए,

बिजली से जलवाँ बसाया जी ॥२०३॥

(बहो) "होरे से कारण हिमा बरसाए,

बोए बीज से बसों जी ।"

तो साधु बाने हिमा बरा से,

हिमा पर में बरा बरा बसोही ॥२०४॥

'पुत्रपान्नाद' से नाम से ने,

सेउजातर धमे बनाया जी ।

धमे से बाने हिमा हुई परा,

सेने मिध्यात बरा न बनायाजा ॥२०५॥

(बहो) "दण्डन धम अर हिमा पाप में,

दोनों मानां न्यारा जा ।"

(उत्तर) तो साधुओं बन्मदना धमे में,

हिमा पाप में पारां जी ॥२०६॥

उगाड़े मुख बोलो (धने) आहार आमंत्रे,

(बलि) मुख खुले बोल बेरावे जी ।

जीव असंख्य, हृष्या तुम बाने,

गुरु कियो बोमासो जी ।

कोठारथां शुद्ध श्रद्धा घारी,

पामी ज्ञान प्रकोशो जी ॥रक्षा०॥ ॥१२९॥

इति नवमी दिवाल सम्पूर्णम् ।

ॐ शान्तिः ॐ शान्तिः ॐ शान्तिः



दयादान प्रतिपादक

श्रीगव्वूलालजी महाराज

विरचित—

पद्य-संग्रह

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

ज्ञानके गुण ही मेरी जान

दान से पादोने बख्शाण ॥दोहा॥

प्रथम श्री शारदादेव भगवान,

हुए धीरवीरिणमें दृढमान ।

भर्मा ने दिया है यहाँ दान,

जात्यमें है जिनका परमान ॥

दोहा

एक शीत आठ लाख सोनेया

हाथमें देते दान ।

दुःख मिटाया दुखी जीवका,

पाया पद निर्वान ॥

इसने समस्त सकल जहाना ॥दान०॥१॥

सुत्र टाणायंग मत्तार,

दान करमाया दस प्रकार ।

यथा अर्थ लो हिरदयमें धार,

तिरने चाहो यदि संसार ॥

दोहा

अनुकम्पा संग्रह भय, कालुणि लज्जा जान ।

गारव अधर्म धर्म जाठवां, काहीह कृन दान

युक्तियों खोटों मनसे लंगाये ।

सदी ही अपना स्वार्थ चाये,

औरको देना दिया छठाये ॥

दोहा

अनन्त संसार बढाये के,

जावे जन्म को हार ।

प्राणीमात्रसे बंधे बंधे है,

देखो शास्त्रे संसार ॥

दसवे अंगमे है यह ज्ञान ॥दान॥७॥

क्षमादि धर्म निभाने काज,

मुनीको दे संजम को साज ।

अशनादिक धेतुर्दश जानो,

क़ासुक निर्दोषा मानो ॥

दोहा

भव परम्परा घटायेके,

बाँधे पुण्य अंपार ॥

स्वर्गादिकको कद्वो पावे,

पावे मोक्ष द्वार ॥

यही करना मयका कल्पयोग ॥दान॥८॥

ई सुखद कृपाय देव पाया,

कुंवर ध्यायेंस दरवावा ।

बहाराया दायेंसता पानी,

दांरुदण जसोमनि गानी ॥

दोहा

नेम राजुल हां गये,

पाहसमीं जिन राज ।

तोरण जाहल पशु बगार्ये,

अभयदानके काज ॥

मोक्ष गये कर्ये अक्षयध्यान ॥दान०॥१॥

पन्ना शास्त्रिभद्र कुमार,

दानसे पाये सुख अपार ।

सुपाहु कुंवर आदि सुखदाय,

गये जो स्वर्ग मोक्ष सुख पाय ॥

दोहा

अनन्त जोय जो तर गए,

भव संसार मदान ।

समी तरहका सुखकां चाहो,

देमो सुपात्र दान ॥

कहाँ तक मैं कर सकूँ यथानं ॥दान०॥१०॥
 धर्म दान है दो परंकार,
 सुपात्र अभयदान विचार
 कह दिया सुपात्र दानका हाल,
 सुनो अब अभयदानकी चाल ॥

दोहा

मरण भय सबसे बड़ा,
 मरना न चाहै कोय ।
 मरण भय जो कोइ मिटावै,
 तन धन देकर सोय ॥
 कमावै जगमें धर्म महान ॥दान० ॥११॥

श्रेष्ठ ये सब दानोंमें दान,
 कहा अंग दुसरेमें भगवान ।
 इसीसे हुए हैं शांतीनाथ,
 सुनो मेघरथ राजाकी बात ॥

दोहा

भय पाया परेबड़ा,
 आण गोद मंझार ।
 अपना तन दे उसे बचाया,

दया - विद्या का दाय ॥

विद्या का दाय विद्या विद्या का दाय ॥

दया ही दाय का दाय ॥

दया ही दाय का दाय ॥

दया ही दाय का दाय ॥

दया ही दाय का दाय ॥

दादा

दया ही दाय का दाय ॥

दया ही दाय का दाय ॥

दया ही दाय का दाय ॥

दया ही दाय का दाय ॥

दया ही दाय का दाय ॥दान०॥१॥

दया ही दाय का दाय ॥

दया ही दाय का दाय ॥

दया ही दाय का दाय ॥

दया ही दाय का दाय ॥

दादा

दया ही दाय का दाय ॥

दया ही दाय का दाय ॥

करते ऐसे काम ।

धोतरागका जाशय छोड़ो,

करते अपना नाम ॥

घाम नरकोके लो पहिचान ॥ दान ०१२६ ॥

अपना पेट भरनके काज;

प्रथम ही पांचो गाड़ी पाज ।

पोलन मुत्तसे न आई लाज,

आपही पन घैठे हैं जहाज ॥

दोहा ॥

हम सिवाय संसारके,

सप कृपात्र नर नार ।

पात्र हमारे भरदो पूरण,

पोले पारंपार ॥

जौरको देना पाप महान ॥ दान ०१२७ ॥

हमको दिया धर्म कल पाय,

जौरको दिया पाप बनलाय ।

भूलसे दो दुस्तरको दान,

। से करलो पछतान ॥

दोहा ॥

ऐसी बात अनेक बनाकर,

फसा दिये नर नार ।

समझाना हो गया है मुश्किल,

चाहे आप करतार ॥

आती इनकी करुणा महान ॥दान० ॥१८॥

ढाल दूसरी

म्हाने आवे अनुकम्पा किस विच,

तिरसी रे पांती आनमा ।

प्रसू कृपा करीने सदयुद्धि,

देयो मोरे आनमा ॥ देर ॥

शासन नापक योर प्रसू जो,

शौचिसमां जिनराज ।

साधु साध्वी श्रावक श्राविका,

सुमिरण करते आज ॥

अयोद्धि और कलिकालमें,

यही तिरणकी जहाजरें ॥ म्हा० ॥ १ ॥

माताका उपकार परम है,

देव गुरु समान ।

विनय भक्ति आज्ञाका पालन,

सुकून मांय यखान ॥

स्वर्ग सुखोंका सावन समझो,

यही प्रभुकी धारें ॥ म्हा० ॥ २ ॥

तीन ज्ञान घर थे जय प्रभुजो,

गर्भावास दरम्यान ।

जननी की अनुकम्पा करके,

धर दिया निश्चल ध्यान ॥

जीवन रहते संजम न लूं,

अभिग्रह पहिचानरें ॥ म्हा० ॥ ३ ॥

इस करगी में पाप बताते,

कलियुगके सरदार ॥

चार ज्ञान घर चूके कहकर,

चढ़ावे स्तिर पर भार ॥

पाप कहैं वे पापी नर हैं,

पाखंड मतके धार रें ॥ म्हा० ॥ ४ ॥

सर्वज्ञ मुखसे सुना है मैंने,

सुन जम्बू अणोंगार ।

छद्मस्थपन में पाप न कीन्हा,

वीर एक भी धार ॥

भांधारंग में सुघर्म स्वामी,

यह कीन्हा निर्धार रे ॥ म्हा० ॥ ५ ॥

कलोकाल के जन्मे कहते,

वीर गये हैं चूक ।

अनुकम्पाका द्वेषी वेशी,

झूठ मचाई हूक ।

अहन्त अयगुण वाद सोलकर,

सत्यसे गये हैं सूखरे ॥ म्हा० ॥ ६ ॥

छे लक्ष्म्या छद्मस्य वीर में

इसकी करके धाय ।

चूका कहते वीर मन्को,

सूतर बधन छत्पाप ।

झूठी कयनी कथी अज्ञानी,

सुनके उपजे ताप रे ॥ म्हा० ॥ ७ ॥

हाथ जोड़ कर शोश नमाऊँ,

सुनो धीर भगवान् ।

निन्द्य हृत्पथो हृत्पथो,
मेरे हृत्पथे प्रायः ॥

शोभ भाव मुदरानो एत शायो,
मांग प्रभुते जान रे ॥ स्तो० ॥ ८ ॥

हेदयाथा लक्षण परमाया,
गणधरजी पृंगाय ।

प्रीतिमता ज्ञापेनको देखो,
सुणजो तुम हृत्पथाय ।

किंजित लक्षण तुमो सुनाऊं,
पारो हिरदय मांग रे ॥ स्तो० ॥ ९ ॥

हिंसा कर्ता छूठ पांलता,
घोर लम्पटो जानो ।

महा समत्वा प्रमादी पूरा,
तोत्र आरम्भी मानो

मन एच पाया रसे मांगटा,
करे छकायकी हानोरे ॥ स्तो० ॥ १० ॥

सपका अहित करनेवाला,

धुष्टि क दुर्गु पा भरता ।

लक्षण नील लेटपाका ऐसे,

पीरमे पशोंकर पाता ॥ म्हा० ॥ १४ ॥

टेढा षोले टेढा चाले,

टेढा एी करं काम ।

कपटी लपना दोष छिपावे,

मिथ्या दृष्टी नाम ॥

अनार्थ बज्र सरीखा षोले,

करं चोरीका काम रं ॥ म्हा० ॥ १५ ॥

गुणो जनो का मत्सर धरता,

कपोत लेश्या मानी ।

ऐसी लेश्या वीरके कहते,

वे हैं षडे अज्ञानी ।

कलीकाल की महिमा देखो,

कैसे हैं अभिमानी रं ॥ म्हा० ॥ १६ ॥

प्रशस्त लेश्या पावे मुनि में,

भगवती में करमाया ।

प्रथम शतक उद्देशा पहिला,

पूरा भेद बताया ॥

महावीरके वचन अराधो,

सकल करो सब काया रे ॥ म्हा० ॥ १७ ।

द्रव्य भावसे प्रशस्त लेइया,

वीर प्रभु में जानो ।

छ लेइया पानेको अथ तुम,

सूठो हठ मन तानो ॥

परमथ निश्चय जाब नो सरे,

छोड़ देवो दुर्ध्यानोरे ॥ म्हा० ॥ १८ ॥

तीन मुषनमें रूप अनूपम,

कंचन वर्णो काया ।

पद्मगंधसे सुगन्ध अनन्ता,

इयासोच्छ्वास सुखदाय ॥

उज्वल लोही मांस प्रभूका,

यही अतिशय कहाय रे ॥ म्हा० ॥ १९

महावीर को छट्मस्यमवस्था,

कैसे करूँ वचन ॥

बारा वर्ष छःमास अधिक में,

पाये केवळ ज्ञान ॥

घोर तपस्या करी घोर प्रभु,

शांते धर्म ब्रह्मण रे ॥ म्हा० ॥ २० ॥

ग्याता धर्म के लिये धर्मोत्तम दिन,

तपस्स धर्म, दयालु ।

सन्त जगत् स्थाप्यो धर्मोत्तमो,

तज निद्रा ही शान्त ॥

धर्म ध्यान सब शुद्ध ध्यान में,

व्यक्ति बियो शुभ काल रे ॥ म्हा० ॥ २१ ॥

किया न बोध किसी जीव में,

किन्तु किया कन्याम ॥

पाली सुनती सुखि भेद से,

महाव्रत पाँचों महान ॥

शौन साप हो ले आनापना,

स्त्रीयो ध्यान ब्रह्मण रे ॥ म्हा० ॥ २२ ॥

देव मनुष्य निर्घंघ शास रे,

सखा परीपद भारी ।

दुःख दिया नहिं किसी जीव को,

धन सब के हितकारी ॥

गुण अनन्ता कहाँ सक गाऊँ,

जल्प बुद्धि है म्हा० रे ॥ म्हा० ॥ २३ ॥

ढाल तीसरी

दान की महिमा जति भारी,
भाव शुद्ध से हैं सुखकारी ॥ देर ॥

भाज इस काले काल माईं,
निर्दयता रही जग छाईं ।

अनुकम्पा दान कौन देवे,
'खोटी मौजा मे रेवे ॥
दोहा ॥

इण ऊपर कुगुरु मिले,
दो अनुकम्पा उठाय ॥
सहाय करे दुखिया को दान से,
उसमें पाप पनाय ॥

ऐसे हैं जैन—वेश धारो ॥ दान० ॥ १ ॥

साधु हम भरत खंड माईं,
मुपातर हमहिज हैं भाईं
कुपातर और सभी जानो,
ऐसी तो कुगुरु ०

रिजु घालिका नदी बिलारें,

ध्यायो शुरु ध्यान ।

नाश किया धनघाती कर्म जब,

प्रभु पाया केवल ज्ञान ॥

बहुत जीव को तारे प्रभु ने,

पाये पद निर्वाण रे ॥ म्हा० ॥ २४ ॥

अवधि मन पर्जाय ज्ञान,

और पांचवों केवल ज्ञान ।

जो जो भाव देखा उन मांही,

वही किया वृद्धमान ॥

ऐसा प्रभु का सरणा लेवे,

निश्चय होत कल्याण रे ॥ म्हा० ॥ २५ ॥

जवाहिर लाल जो पूज्य प्रसादे,

जोड़ी गन्धू लाल ।

सरदार शहर के माप ने सरे,

सिम्हासी के साल ॥

गावे जो कोई नर नारी,

तो पावे मंगल माल रे ॥ म्हा० ॥ २६ ॥

बाल तीक्ष्णी

दान की महिमा जनि भारी,
भाव शुद्ध से हैं सुखकारी ॥ टेर ॥

भाज इस काली काल माईं,
निर्दयता रही जग छाईं ।

अनुकम्पा दान कौन देवे,
छोटी मौजा मे रवे ॥

दोहा ॥

इण उपर कृगुरु मिले,
दो अनुकम्पा उठाय ॥

मटाय करं दुखिया की दान से,
उसमें पाप बत्ताय ॥

ऐसे हैं जैन—वेश धारो ॥ दान० ॥ १ ॥

साधु हम भरत खंड माईं,
सुपातर हमहिजं हैं भाईं ।

कुपातर जौर सभी जानो,
ऐसी तो कृगुरु करे ताणो ॥

❖ पाचवीं ढाल ❖

ब्रह्मचारो होतो कहो, पारं वारियां रे ॥ टेर ॥

साधु स्थान में रात पढ्यां,

मत आओ नारियां रे ॥ ब्र० ॥

उत्तराध्ययन सूत्र के मांप,

सोलमा अध्ययन है सुखदाप ।

ज्यामें भाष गया जिन राप,

प्रथम गाथा देखो चित लाप ॥

खोल हृदय किबाडियां रे ॥ ब्र० ॥ १ ॥

आचारंग की भावना देखो,

नववाङ्ग हृदय से पेलो ।

सुनिये प्रश्न व्याकरण को लेखो,

अब तो काम राग ने छेको ॥

सीख सुख कारियां रे ॥ ब्र० ॥ २ ॥

सहित मकान में रेवे,

और कया उनही कोकेवे ।

नशीध सूत्र प्रायश्चिन देवे,

अष्टम उद्देशे देख लेवे ॥

किया निवारियां रे ॥ ब्र० ॥ ३

जैनी साधू नाम धराये,

सेवा धायों से कर वावे ।

नहीं शरम जरा पिण आवे,

पुरुष पास में नहीं रहावे ॥

या सेवा दुख कारियां रे ॥ ब्र० ॥ ४

जिनेश्वर की आज्ञा को लोप,

मिथ्या धर्म को खूंटो रोप ॥

भोले नर नारो हैं चोप (द)

वांधन वाले यही गोप ॥

न किसो ने विचारियां रे ॥ ब्र० ॥ ५ ॥

नारी स्वरूप शास्त्र में गाया,

जिसका पूरा भेद बनाया ।

महा ज्ञानो ध्यानो डिगाया,

तुम तो हो कलिकाल के जाया ॥

हे नागन सो नारियां रे ॥ ब्र० ॥ ६ ॥

छठवीं ढाल

कुनति घट दर्शाई रे ॥ ढेर ॥

अनुकन्या दया को सावज
 ढेराई रे ॥ कुनति घट० ॥

आचारंग आदि दत्ताम मूतर,
 नव ही जैन मिर घारा रे ।

मूर पाठ जर्भ टोका अन्दर,
 नहीं (यः) शब्द उचारा रे ॥ कु० ॥ १॥

कई व्याकरण शेष किनेई,
 प्रसिद्ध दुनियां माई रे ।

सावज अनुकन्या शब्द पाया,
 न घुनति पाई रे ॥ कु० ॥ २ ॥

टोका चूर्णि भाष्य पहुन हँ,
 जबचूरि दापिका जानो रे ।

न्याय अरुंकार वेद पुतान मे,
 नहीं परनागो रे ॥ कु० ॥ ३ ॥

अनुकम्पा कही कछुवा कही चाहे,

दया शब्द उचारो रे ।

तीनु ही शब्दका रक्षा करना,

अर्थ विचारो रे ॥ कु० ॥ ४ ॥

भाव्य कहते पापको भाई,

म शब्द आदि लगावे रे ॥

पाप महित भाव्य शब्द बना है,

मो मूत्र दिलावे रे ॥ कु० ॥ ५ ॥

सहस्र किरण मूरज उगा अरु,

अंधेरा अति छाया रे ।

दोनों माथ में कबो नहीं रहते,

यही छम माया रे ॥ कु० ॥ ६ ॥

शीतल वन्दना कह दिया फिर,

अग्नि क्षमा बनावे रे ।

मूढ़ मर्मा यों ही दया कह कर,

फिर मायत बनावे रे ॥ कु० ॥ ७ ॥

काह्य काह्य समझे नहीं मूल्य,

बोधाने बहकावे रे ।

१५५ ने तो काह्य बनाई,

दया उठावे रे ॥ कु० ॥ ८ ॥
 साधु ने असाधु कहे तो,
 मिथ्यात लग जावे रे ।
 वैसे ही कारण ने कारज बतावे,
 तो मिथ्यात फैलावे रे ॥ कु० ॥ ९ ॥
 गुरु भक्ति में तो लाभ बतावे,
 दरशन करवा जावे रे ।
 गाड़ी घोड़ा जंट रंल चढ़े जप;
 जीव मर जावे रे ॥ कु० ॥ १० ॥
 कारज तो गुरु भक्ति करना,
 कारण असवारी जाणो रे ॥
 कारणमें आरंभ पिण होवे,
 लाभ कारज जाणों रे ॥ कु० ॥ ११ ॥
 तिर्यंभ हो कर दया जो पालो,
 श्रं णिक नृप घर जाया रे ।
 मेघरथ राजा दया जो पालो,
 नौर्यंकर कहलाया रे ॥ कु० ॥ १२ ॥
 हरण गमेष्वादि कई देवता,
 दया जीवां की कीचारे ।

मरते जीव बचावां रे ।

जीव दया के प्रताप सभी दिन,

साना पावो रे ॥ कु० ॥ १८ ॥

मोह अनुकम्पा और सावज दयां,

अब तो कड़ना छोड़ो रे ।

पूर्व पाप का पश्चाताप करो ने,

कर्म को तोड़ो रे ॥ कु० ॥ १९ ॥

संवत् इन्नीसौ साल विन्धासो,

सरदार शहर मांही रे ।

असोज वदी अष्टमो दिन में,

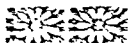
जोड़ बनाई रे ॥ कु० ॥ २० ॥

पूज्य जवाहिरलाल प्रसादे,

'जैन बाल' सुख पाया रे ।

दया धर्म का मनं भाव से,

गाय सुनायो रे ॥ कु० ॥ २१ ॥



आहार मंगावे पाणी मंगावे,
 बोझा अपना लोकावे रे ।
 ओघा घटावे पात्र रङ्गावे,
 वस्त्र सिवावे रे ॥ इच० ॥ ४ ॥
 दिहार करे जब राजसत्याँ जी,
 आगे आगे जावे रे ।
 दोनों वक्त पलेपण करेने,
 आसन विछाने रे ॥ इच० ॥ ५ ॥
 साधु जीमे सतिया परुपे,
 या विष कहां से आई रे ।
 किस गणघर ने किस शास्त्रमांही,
 आज्ञा घटाई रे ॥ इच० ॥ ६ ॥
 महावीर का निन्द्य होता,
 जामाली विख्यातो रे ।
 वीमार पड़ा जब चेलापासे,
 सेजा विछातोरे ॥ इच० ॥ ७ ॥
 चौधे आरे में निन्द्य होना,
 यह काम नहीं करना रे ।
 अब से बढ़ कर बातें,

अब करवाया रे ॥ इच्छा० ॥ ८ ॥

अपिधि से साधु स्थान में,

अगर आरज्य जाये रे ।

सुतरे षोड करं पदि वहाँ पर,

तो प्रापदियत आये रे ॥ इच्छ० ॥ ९ ॥

व्यथहार मृग में माक मना है,

देयां आंले लोली रे ।

बिन कारण अपायय नहि करता,

यो श्रितै ताली रे ॥ इच्छ० ॥ १० ॥

गच्छाचार पदेन्वा में लिखा,

आशुर्गं आशुर्ग ल्यावे रे ।

नपुंसक गच्छ कथा रे यो,

जा आशुर्ग ल्यावे रे ॥ इच्छ० ॥ ११ ॥

सुख सेवता यनाई प्र-जा,

दागायन के भाई रे ।

मानु भवने हाथ से नाथाना,

ल्यावे मदाई रे ॥ इच्छ० ॥ १२ ॥

बाल हाथ कर शिक्षा मृगा,

हिए रे माता याना रे ।

पुष्पा कार पराक्रम करके,
 भुगतो पधारो रे ॥ इच० ॥ १३ ॥

॥ गजल ॥

कलियुग के जो नाम धारो जैन,

आवक सुनिये जरा ।

दर्द हमको होत है

करतून, तुम देखी जरा ॥ टेर ॥ १ ॥

लाकर दया गरीब की कोई,

दान अनुकम्पा करे ।

उसको पाप बताते हो तुम,

कैसे वाक्य ऊचरे ॥ २ ॥

बचावे मरते जोव को,

अभय दान प्रभुजोने कहा ।

धर्म के बदले में जय जो,

पाप ही तुम ने कहा ॥ ३ ॥

न्याय नीति युक्त कोई करे,

हैं दण्डोत्थान है ।

स्वार्थ अन्दर लिपटाय के,
 कहते पाप जो महान है ॥ ४ ॥
 माता पिता का पुत्र वे,
 उपकार शास्तर में कहा ।
 पाप एकन्त तुमने तो
 सेवा करने में कहा ॥ ५ ॥
 पतित पावन जैन दर्शन,
 के नियम विशाल हैं ।
 जिसके सहारे गर कोई,
 चाले तो होवे न्याल है ॥ ६ ॥
 राय परदेशी को निर्दयना,
 यद्वा जो कूरता ।
 देखो न गई बित मारपी से,
 उसकी यद्वा निष्ठुरता ॥ ७ ॥
 प्रत्यक्ष ज्ञानी केमी स्वामी को,
 कटे सरनाथ के ।
 सद्गुणदेश देवो प्रभुजी,
 हम पे कृपा लाय के ॥ ८ ॥
 अनेक पशुपक्षी को ये,

मौत से ये मारता ।

जीवों को रक्षा होवे और,

राजा धने दया पाउता ॥ ९ ॥

मानी अदानो है राजा,

तकलीफ भिक्षु को देन है ।

दोजिये अब ज्ञान ऐसा,

सबसे भलाई लेन है ॥ १० ॥

कठोर कर से इनकी प्रजा,

सारी बनो व्यकूल है ।

संतोष सदको हो प्रभु जी,

इन्हें ज्ञान दो अनुकूल है ॥ ११ ॥

पास में मेरे बां जावे,

ज्ञान जरूर पायगा ।

जो हजूर ये दास तेरा,

चरणों में इन्हे लायगा ॥ १२ ॥

बद्व का पहना बना है.

लाया मुनी के पान्न में ।

युक्तियां दे ज्ञान की,

मुक्त किया मोह पान्न से ॥ १३ ॥

ज्ञानी घना ध्यानो घना,

दानो घना घना तपसी महा ।

दुख मिटाया सुखी बनाया;

घन गुरु केशी महा ॥ १४ ॥

मिथ्या श्रद्धा छोड़ के,

भव चित्त सम घन जाइये ।

होयगा कल्याण सबका,

ये बात हिरदै लाइये ॥ १५ ॥

साल अठ्यासो भादरा में,

पूज्य जयाद्विर लालजी ।

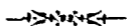
दादस सन्त साथ में,

विराजे शेष काल भी ॥ १६ ॥

इति शुभम्



शुद्धि पत्र



पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध शब्द	शुद्ध शब्द
२४	११	मूल	मूल
२८	११	कृष्णजीका	कृष्णजीकी
३१	२	वां	(वां)
३२	१८	एयवो	एहवो
४२	२	टांटा	टांटा
४४	१२	हूंसी	हंसी
४७	३	दृष्टान	दृष्टान्त
४७	१८	टागा	टागी
६७	१८	गान	गाया ८
७६	१८	नियच	नियं च
८१	१८	जानो	जागी
९३	१	णोहो	णोही
९५	१६	मननेन	मननेनेन
९७	४	दुस्यो	दुसोयो

पृष्ठ	पंक्ति	मशुद्ध शब्द	शुद्ध शब्द
१८६	१८	डावडो	डावडा
१८७	६	जा	जो
१८९	१४	जाव	जीव
"	"	जा	जा
१९६	१८	पचया	पचाया
२०२	७	घमं	घर्म
२०६	११	मारतां	मरतां
*२०९	४	याड़यारोतियारं—पाडणरी निणरं	
२१७	१८	करनेको	करने हो
२१९	११	३९	६९
"	१६	हो	हो
२२४	६	सेणिक	श्रेणिक
"	६	तुम्हें	न्हें
२२६	१०	तणा	तणी
२२७	१७	वारजो	वीरजो
२२९	७	वीरो	वीर
२३६	३	षारा	षारो
२४१	११	उणें	उण

* कुछ प्रतियों में शुद्ध उपा है ।

